जनवरी
2024

धर्म एवं अध्यात्म के तत्त्वज्ञान का वैज्ञानिक विश्लेषण

अखण्ड ज्योति

वर्ष – 88 । अंक – 1 । प्रति – ₹ 25 । ₹ – 300 वार्षिक

8
मनाएँ वर्ष 2024 को नूतन संकल्पों के साथ

20
अद्भुत है आचार्य शंकर की गंगोत्तरी धाम यात्रा

24
पुनर्जन्म का सिद्धांत

51
प्रभावशाली जीवन के स्वर्णिम सूत्र

75 वर्ष पूर्व अखण्ड ज्योति

जनवरी-1949

प्रकृति का आश्रय लेने से ही आरोग्यता प्राप्त होगी

आज तक संसार में जितनी चिकित्सा प्रणालियाँ हैं, उनके मूल में दो प्रवृत्तियाँ कार्य करती हैं। इन सभी अनुसंधानों का अध्ययन हम दो विभागों के अंतर्गत कर सकते हैं। एक तो यह कि मनुष्य को, जैसा कि प्रकृति चाहती है, पूर्ण स्वस्थ, नीरोग, पुष्ट, दीर्घजीवी, उन्मुक्त किस प्रकार रखा जाए, अर्थात स्वास्थ्य के संरक्षण के लिए किन-किन प्राकृतिक नियमों का पालन करना चाहिए। इस विभाग के अंतर्गत उन प्राकृतिक नियमों का प्रतिपादन किया जाता है, जिनसे मनुष्य प्रकृति के निकट आता है और साहचर्य द्वारा पूर्ण स्वस्थ रहता है। नियम यह है कि प्रकृति से हम जितनी दूर जाएँगे अर्थात प्रकृति- नियमों का अतिक्रमण करेंगे, उतने ही रोगी, दुःखी और दीन-हीन होंगे। जितने ही प्रकृति के समीप रहेंगे, प्राकृतिक नियमों का पालन करेंगे, उतने ही स्वस्थ रहेंगे। प्रकृति के समीप रहना हमारा आदर्श है।

दूसरा विभाग है रोग का निवारण। प्रकृति के नियमों की अवहेलना करने से यदि हम रोगी हो जाएँ, तो पुनः किस प्रकार स्वास्थ्य लाभ करें? इसका उत्तर होगा कि हम पुनः प्राकृतिक नियमों का पालन करने लगें, दूरी छोड़कर पुनः प्रकृति के समीप आएँ। सभी चिकित्सा प्रणालियाँ किसी न किसी रूप में प्रकृति के समीप आने की चेष्टा करती हैं।

— श्रीराम शर्मा आचार्य

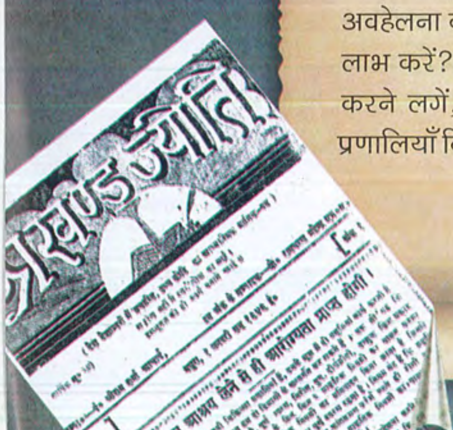

संस्थापक-संरक्षक
वेदमूर्ति तपोनिष्ठ
पं० श्रीराम शर्मा आचार्य
एवं
शक्तिस्वरूपा
माता भगवती देवी शर्मा
संपादक
डॉ० प्रणव पण्ड्या
कार्यालय
बिरला मंदिर के सामने मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा (281003)
दूरभाष नं० (0565) 2403940, 2972449
2412272, 2412273
मोबाइल नं० 9927086291
7534812036
7534812037
7534812038
7534812039
समय—प्रातः 10 से सायं 6 तक कृपया इन मोबाइल नंबरों पर एस. एम. एस. न करें।
नया ईमेल-
akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

वर्ष	:	88
अंक	:	01
जनवरी	:	2024
पौष-माघ	:	2080
प्रकाशन तिथि	:	01.12.2023

वार्षिक चंदा

भारत में	:	300/-
विदेश में	:	2800/-
आजीवन (बीसवर्षीय) भारत में	:	6000/-

युग-युग की साधना

'युग-युग की साधना'—हम सबके सर्वस्व-सौभाग्य परमपूज्य गुरुदेव का जीवन सत्य है। युगों-से-युगों तक चलने वाली उनकी सनातन साधना की यह जीवन-कहानी है। युग बदले—तो समय की समस्याएँ बदलीं, साधना के उद्देश्य बदले, आयाम बदले; पर साधना सदा-सर्वदा शाश्वत बनी रही। बदलते समय के साथ उनकी जीवन-चेतना ने अनेकों कलेवर बदले।

'**बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन**'—इस गीता कथन की भाँति उनके और हम सब सेवकों, सहचरों व शिष्यों के अनेकों-अनेकों जन्म हो चुके। जिन्हें हम सब तो भूल गए; पर उन्होंने हम सबको, अपने सभी जन्मों को याद रखा। इनमें से कुछ को उन्होंने हम सबके लिए प्रकट भी किया। वे कभी कबीर की निर्भीक वाणी का वर्चस् बनकर आए, कभी समर्थ रामदास के रूप में उन्होंने अपनी सामर्थ्य से छत्रपति शिवाजी महाराज को समर्थ किया और कभी श्रीरामकृष्ण परमहंस के रूप में 'जे राम जे कृष्ण-शेई रामकृष्ण' कहकर अपने सनातन और शाश्वत स्वरूप को प्रकट किया।

अब इस युग में वही परात्पर चेतना अपनी पराशक्ति के साथ हम सबको अपने साथ, अपने युग-साधना के सूत्र में मणियों की तरह गूँथकर धराधाम पर आई और हमारे भगवान अपने भक्तों के साथ युग-युग की युगांतरीय साधना से युग-परिवर्तन करने आए। ❐

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

विषय सूची

- आवरण—1 ... 1
- आवरण—2 ... 2
- युग-युग की साधना ... 3
- **विशिष्ट सामयिक चिंतन**
  आओ बनाएँ व्यसनमुक्त भारत ... 5
- मनाएँ वर्ष 2024 को
  नूतन संकल्पों के साथ ... 8
- **पर्व विशेष—मकर संक्रांति**
  गतिशीलता से स्थिरता की ओर
  बढ़ने का पर्व ... 10
- विजय रथ का दिव्य प्रतीक है जीवन ... 12
- अंतर्मन की पुकार है प्रार्थना ... 15
- भक्त की भक्ति से छूट जाता है संसार ... 16
- नवयुग ... 19
- अद्भुत है आचार्य शंकर की गंगोत्तरी धाम यात्रा ... 20
- तिथियों का ज्योतिषीय महत्त्व ... 22
- पुनर्जन्म का सिद्धांत ... 24
- **ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—177**
  गठिया रोग का उपचार ... 26
- कैसे चुनें सही कैरियर ... 30
- **युगगीता—284**
  मोक्षप्राप्ति का मार्ग ... 33
- नववर्ष की मंगलकामना ... 35
- **पूज्य गुरुदेव : जैसा मैंने देखा-समझा—16**
  हिमालय की दिव्यता ... 39
- नालंदा विश्वविद्यालय का समृद्ध इतिहास ... 40
- **परमवंदनीया माताजी की अमृतवाणी**
  विषम परिस्थितियों में हमारे दायित्व
  (प्रथम किस्त) ... 44
- प्रभावशाली जीवन के स्वर्णिम सूत्र ... 51
- **विश्वविद्यालय परिसर से—223**
  गीता में योग-साधना ... 54
- पर्यावरण असंतुलन का वीभत्स स्वरूप ... 60
- राष्ट्रजागरण का आधार है—परिष्कृत भावना ... 62
- भारत की ऐतिहासिक उपलब्धि ... 65
- **साधना शताब्दी-विशिष्ट लेखमाला**
  महामानवों के जागरण का समय ... 67
- समर्पण की गरिमा (कविता) ... 70
- आवरण—3 ... 71
- आवरण—4 ... 72

आवरण पृष्ठ परिचय

2024 वर्ष आया, सूर्य प्रकट हुआ, पुष्प खिलने लगे

जनवरी-फरवरी, 2024 के पर्व-त्योहार

रविवार	07 जनवरी	सफला एकादशी	सोमवार	29 जनवरी	संकष्ट चतुर्थी
शुक्रवार	12 जनवरी	स्वामी विवेकानंद जयंती	मंगलवार	30 जनवरी	शहीद दिवस
रविवार	14 जनवरी	मकर संक्रांति	मंगलवार	06 फरवरी	षट्तिला एकादशी
मंगलवार	16 जनवरी	सूर्य षष्ठी	शुक्रवार	09 फरवरी	मौनी अमावस्या
बुधवार	17 जनवरी	गुरु गोविंद सिंह जयंती	बुधवार	14 फरवरी	वसंत पंचमी/बोध दिवस
रविवार	21 जनवरी	पुत्रदा एकादशी	गुरुवार	15 फरवरी	सूर्य षष्ठी
मंगलवार	23 जनवरी	नेताजी सुभाष चंद्र बोस जयंती	मंगलवार	20 फरवरी	जया एकादशी
शुक्रवार	26 जनवरी	गणतंत्र दिवस	शनिवार	24 फरवरी	संत रविदास जयंती

★ **यह पत्रिका आप स्वयं पढ़ें तथा औरों को पढ़ाएँ। कुछ समय के बाद किसी अन्य पात्र को दे दें, ताकि ज्ञान का आलोक जन-जन तक फैलता रहे।** —*संपादक*

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

आओ बनाएँ व्यसनमुक्त भारत

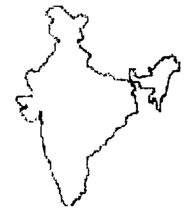

संपूर्ण विश्व के मानचित्र पर यदि दृष्टि दौड़ाई जाए, विभिन्न देशों, संस्कृतियों, सभ्यताओं की ऐतिहासिक विरासत की एक समीक्षा यदि की जाए तो सहजता से इस सत्य का अनुभव किया जा सकता है कि जो सौभाग्य भारत को, भारतभूमि को मिला—वो संपूर्ण वैश्विक पटल पर शायद ही किसी अन्य देश को मिल सका।

यदि भारतभूमि की ऐतिहासिक और पौराणिक विरासत का एक विहंगावलोकन किया जाए तो यह सत्य भला कौन न जान सकेगा कि यह भारत की भूमि वही प्राचीन भूमि है, जहाँ यूरोप और अमेरिका के तटों को छूने से पहले आध्यात्मिक अभीप्सा ने और तत्त्वज्ञान ने अपना निवास स्थान बनाया था। इस सत्य को भला कौन भुला सकता है कि यह वही प्राचीन और पवित्र भूमि है, जहाँ से निस्सृत होने वाली योग, तप, ज्ञान, ध्यान, दर्शन-अध्यात्म की धाराओं ने मानवता का परिचय उस प्रकाश से कराया था, जिसका स्पर्श पाते ही पैशाचिक प्रवृत्तियों वाला मनुष्य दिव्यता की प्रतिमूर्ति बन जाता है।

इस सार्वभौम सत्य को भला कौन ठुकरा सकता है कि इसी भारत की भूमि को यह सौभाग्य मिला कि इसने सप्त ऋषियों से लेकर संतों, अवतारों, अवधूतों, महापुरुषों की चरणधूलि को अपने मस्तक पर स्वीकार किया। मनुष्य ने अंतर्जगत के रहस्यों पर से परदा उठाने का प्रथम प्रयत्न इसी भूमि पर किया तो इसी भूमि पर मानवीय उत्कर्ष के जिज्ञासाओं के अंकुर सर्वप्रथम मानवीय मन में फूटे, पुष्पित-पल्लवित हुए। ऐतिहासिक एवं आध्यात्मिक विरासत की दृष्टि से देखें तो भारत को मानवीय विकास पथ को प्रकाशित करने वाले सूर्य के रूप में देखा जा सकता है।

दुर्भाग्य यही है कि इतनी सौभाग्यशाली पृष्ठभूमि पर खड़े हुए मानवता के भवन को, भारतीय संस्कृति के आलय को और आध्यात्मिक परंपरा के केंद्र को किसी की कुदृष्टि लग गई है और इस सूर्य को किसी ने ग्रहण-सा लगा दिया है। जो देश, राष्ट्र, भूमि अपने आध्यात्मिक प्रकाश एवं गौरवशाली युवा नेतृत्व के लिए जाने जाते थे, आज वहाँ दुर्व्यसनों की आँधी ने संपूर्ण परिदृश्य को मटमैला और बेरंग-सा कर दिया है।

यों कहने-लिखने को तो ऐसे अनेक कारण हैं, जिन्हें भारत के विकास पर लगे ग्रहण के रूप में गिना जा सकता है, परंतु उन सभी उपस्थित चुनौतियों में नशे का घातक दुर्व्यसन एक ऐसी चुनौती के रूप में उभरकर सामने आया है कि यदि समय रहते इस विषमता का, विकृति का निराकरण न किया गया तो देश का भविष्य एक ऐसे अंधकारमय गर्त में जाकर गिरेगा कि उससे उभर पाना संभव न हो सकेगा।

क्या यह चिंता का विषय नहीं कि आज भगवान राम-कृष्ण के इस देश में हम चुनौतियों के कुहासे के, एक ऐसे भीषण दौर से गुजर रहे हैं कि आज देश का 10-14 % तक का वर्ग नशे की गिरफ्त में आकर, दुर्व्यसनों का शिकार होकर अपनी, अपने परिवार की, अपनी पीढ़ियों की खुशियाँ

अपने ही हाथों से बरबाद करता नजर आता है ? क्या यह चिंता का विषय नहीं कि आज इस देश में 6.25 करोड़ के करीब लोग शराब के, 1 करोड़ से ज्यादा लोग भाँग से लेकर opioid और विभिन्न अन्य मादक पदार्थों का सेवन करते दिखाई पड़ते हैं। नारकोटिक्स ब्यूरो के आँकड़े इस संख्या को 10 करोड़ के करीब आँकते हैं।

यहाँ प्रश्न यह महत्त्वपूर्ण नहीं है कि कितने लोग इस बुरी लत के शिकार हैं, बल्कि प्रश्न यह महत्त्वपूर्ण है कि जितने भी लोग प्रभावित हैं, क्या वो अपने स्वयं के जीवन के कल्याण को या राष्ट्र के विकास को सुनिश्चित कर पा रहे हैं। यह तो सर्वविदित ही है कि नशा सामाजिक एवं आध्यात्मिक, दोनों ही दृष्टियों से निषिद्ध वस्तुओं में है।

नशा करने से मात्र वही व्यक्ति प्रभावित नहीं होता जिसने नशा किया, वरन अपनी शारीरिक, मानसिक, पारिवारिक, सामाजिक एवं आर्थिक हानि करने के अतिरिक्त वह घर की सुख-शांति, बच्चों के संस्कार और पीढ़ियों का सम्मान गँवा बैठता है। साथ ही एक जिम्मेदार नागरिक से देश भी वंचित रह जाता है। इसलिए इस समस्या का समय रहते निराकरण करना मात्र धार्मिक एवं आध्यात्मिक दृष्टि से मूल्य का नहीं, बल्कि राष्ट्रीय विकास की दृष्टि से भी अतिशय महत्त्व का विषय हो जाता है।

प्रारंभ में तो व्यक्ति नशा करने की आदत को शान बघारने की दृष्टि से ही लेता है, पर एक बार जब वो बीड़ी-सिगरेट मुँह को लग गईं तो फिर छूटने का नाम नहीं लेतीं। चाहे वो बीड़ी-सिगरेट हों या शराब पीने की लत या फिर भाँग, अफीम, गाँजा लेने की आदत हो—शुरुआत का तरीका एक जैसा होता है, पर बढ़ते-बढ़ते एक दिन उसके दुष्प्रभाव के क्षेत्र में पूरा समाज आ जाता है; क्योंकि नशा करने वालों के मध्य से ही हिंसा, अपराध की खबरें भी तो आती हैं।

सारांश में कहें तो नशा करना एक ऐसी बीमारी है, जिसे करता तो एक व्यक्ति है; पर उसकी सजा सारा समाज भुगतता है।

इस समस्या की विषमता एवं व्यापक दुष्प्रभाव को पूज्य गुरुदेव ने सबसे पहले अनुभव किया था और गायत्री परिवार की सप्तक्रांतियों में से एक प्रमुख आंदोलन के रूप में दुष्प्रवृत्ति उन्मूलन-सत्प्रवृत्ति संवर्द्धन को लिया। उससे प्रेरणा पाकर लाखों लोगों ने अपने जीवन की दिशा को बदला एवं सदा-सर्वदा के लिए इन दुष्प्रवृत्तियों की गिरफ्त से स्वयं को मुक्त कराया।

उसी परंपरा को आगे बढ़ाते हुए गायत्री परिवार ने एक राष्ट्रव्यापी अभियान '**आओ बनाएँ व्यसन मुक्त भारत**' को प्रारंभ करने का निर्णय किया है। लक्ष्य एवं उद्देश्य सरल एवं स्पष्ट हैं कि व्यसन में लगी भारतीय यौवन की ऊर्जा को सृजन में नियोजित किया जा सके। इस हेतु एक राष्ट्रव्यापी अभियान को राष्ट्रीय स्तर पर प्रतिष्ठित करने के लिए एक वृहद् कार्यक्रम भी निकट भविष्य में प्रस्तावित है।

सर्वप्रथम तो इस आलेख को पढ़ रहे सभी आस्थावान परिजनों से यह विनम्र आग्रह है कि इस दिशा में जो प्रेरणादायी कार्य उनके द्वारा पहले से किए जा रहे हैं, उनकी सूचना अविलंब रूप से vysanmukti@awgp.org ई-मेल पर पहुँचा दें एवं उसे https://vysanmukti.awgp.org वेबसाइट पर प्रदत्त स्थान पर अपलोड भी कर दें। ऐसा करने से अब तक हुए सभी कार्यों का संग्रहण एक स्थान पर हो भी जाएगा तथा उनको देखकर अन्य-अनेकों को प्रेरणा प्राप्त कर सकना भी संभव हो सकेगा।

इसी ई-मेल पर संपर्क करने से इस अभियान हेतु आवश्यक दिशा-निर्देश, प्रशिक्षण निर्देशिका, एक पावरपॉइंट प्रस्तुतीकरण की प्रति, व्यसन छोड़ने हेतु संकल्प-पत्र का स्वरूप, सृजन-संकल्प हेतु 'सत्प्रवृत्ति संवर्द्धन संस्कार' का प्रारूप भी प्राप्त किए जा सकते हैं। पूज्य गुरुदेव द्वारा इस हेतु लिखे गए सद्‌वाक्यों को एवं उनके साहित्य के सेट को तथा स्टीकर्स को भी इसी माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। साथ ही इस हेतु लिखे गए प्रज्ञागीतों का संकलन भी प्राप्त किया जा सकता है।

'**आओ बनाएँ व्यसनमुक्त भारत**' अभियान आज के समय की एक ऐसी आवश्यकता है जिसमें भागीदारी हर गायत्री परिजन का, हर जिम्मेदार नागरिक का दायित्व बन जाता है। सभी परिजनों-केंद्रों-शाखाओं-प्रज्ञा संस्थानों से ये भावभरा आग्रह है कि इसका अंग बनते ही जनजागरण यात्राओं, सभाओं, संकल्पपूर्ति-अभियानों, कार्यशालाओं को त्वरित रूप से आरंभ कर दें और जो पहले से करते आ रहे हों—वे उन्हें और गति देने का दायित्व अपने कुशल हाथों में ले लें। देश के नवनिर्माण का यज्ञ आरंभ हो चुका है और इस पवित्र तपोनुष्ठान में हर गायत्री परिजन की आहुति निश्चित रूप से डलनी चाहिए। ❑

कोलकाता में एक बार भीषण अकाल पड़ा। मनुष्य तो क्या, पशु-पक्षी भी इसका शिकार होकर दम तोड़ने लगे। वहाँ के एक सेठ मोहनदास अत्यंत धनवान, करुणावान एवं भगवान श्रीकृष्ण के अनन्य भक्त थे। अकाल से मरते व्यक्तियों व पशु-पक्षियों को देखकर उनका हृदय दयार्द्र हो उठा।

उन्होंने मुनीम को तिजोरी से धन निकालकर उससे खाद्यान्न व हरा चारा खरीदकर सभी में बाँट देने को कहा। सेठ जी का पुत्र अपने पिता के इस आदेश पर बहुत चकित व दुःखी हुआ। उसे लग रहा था कि जीवन भर की पूँजी लुटाई जा रही है, जिस पर हमारा अधिकार है।

पुत्र का चेहरा देखकर सेठ जी उसकी मनःस्थिति समझ गए। पुत्र को समझाते हुए उन्होंने कहा—''बेटा! यदि मेरे पास धन होते हुए भी मैं भूख से मरते लोगों को खाद्यान्न नहीं दूँगा, उन्हें मर जाने दूँगा, तो मैं अपने भगवान को क्या मुँह दिखाऊँगा। सभी जीव भगवान के बनाए हुए हैं, सभी में उन्हीं का अंश विद्यमान है, मेरे लिए ये मेरे भगवान के समान ही हैं। मेरा सारा धन मेरे इष्टदेव भगवान श्रीकृष्ण का ही तो है, मैं तो उनका मुनीम मात्र हूँ। इस धन से उनके अंश स्वरूप प्राणियों की जान बच जाएगी तो मेरा संपत्ति अर्जित करना सार्थक हो जाएगा।''

मनाएँ वर्ष 2024 को नूतन संकल्पों के साथ

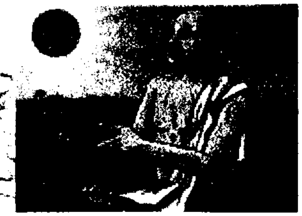

नववर्ष 2024 का आगमन नई आशा, नई उमंगों एवं नई संभावनाओं के साथ हो रहा है। इसको भव्य शुभ-संकल्पों के साथ सजा सकते हैं। बीते वर्ष 2023 में यदि कोई कसर रह गई हो, उसे नववर्ष 2024 में पूरा कर सकते हैं।

आशा है कि सभी इसके लिए पिछले वर्ष का सम्यक मूल्यांकन करते हुए नए वर्ष की नई योजना के साथ तैयार होंगे। इन्हें नीचे दिए गए जीवन-साधना के एक दर्जन भर संकल्प सूत्रों के साथ सजाया-सँवारा जा सकता है।

इस हेतु स्वास्थ्य के प्रति सजगता पहला आधार है। अपनी स्थिति के अनुरूप स्वास्थ्य के संदर्भ में न्यूनतम संकल्प लें; क्योंकि स्वास्थ्य ही सुखी-सफल एवं प्रसन्न जीवन का आधार है। इसके लिए नित्य कुछ समय निर्धारित रखें, जिसमें उचित आसन, व्यायाम से लेकर प्राणायाम, ध्यान आदि की क्रियाएँ शामिल हों।

साथ ही श्रमशील दिनचर्या के साथ उपयुक्त आहार-विहार से लेकर नींद-विश्राम के उचित अनुपान के संग स्वस्थ एवं नीरोग जीवन को सुनिश्चित करें।

ज्ञानार्जन को जीवन का हिस्सा बनाएँ। प्रतिदिन कुछ नया पढ़ें व सीखें। हर सप्ताह व माह नई पुस्तक पढ़ने का संकल्प ले सकते हैं। बाह्य जगत् एवं विषय के ज्ञान के साथ स्वयं के अध्ययन के लिए स्वाध्याय को जीवन का अभिन्न अंग बनाएँ। नित्य कुछ पृष्ठ पढ़ें, उस पर चिंतन-मनन करें और जीवन में धारण करने की योजना बनाएँ तथा समय-समय पर उसके मूल्यांकन की व्यवस्था भी अवश्य करें।

अपने लक्ष्य को और स्पष्ट करें; क्योंकि जीवन की गुणवत्ता लक्ष्य की स्पष्टता एवं गुणवत्ता से जुड़ी हुई है। इसके लिए नित्य स्वयं के लिए कुछ समय दें। खाली समय में इस पर विचार करें। शेष रात को सोते समय तत्त्वबोध के पलों में इसे और प्रगाढ़ता से अंजाम दे सकते हैं। जीवनलक्ष्य के प्रति यह गंभीर सजगता हर परिस्थिति के बीच आवश्यक सीख लेने व आगे बढ़ने के लिए हमें प्रेरित रखेगी।

समय का सदुपयोग करें; क्योंकि जीवन का एक-एक पल कीमती है। अतः अपने लक्ष्य पर केंद्रित रहें। संसार के तमाम व्यवधान आपका ध्यान बँटाने के लिए तत्पर मिलेंगे। इनके झाँसे में न आएँ तथा अपने ध्येय की ओर ध्यान केंद्रित रखते हुए तय मंजिल की ओर बढ़ें, जो स्वयं में एक बड़ा कार्य है। यदि प्रातः उठते ही दिन भर की प्राथमिकताएँ स्पष्ट रहेंगी, तो समय का श्रेष्ठतम उपयोग संभव होगा। इसको एक बार अवश्य अपनाकर देखें।

दूसरों के साथ व्यवहार के अपने मानक निर्धारित करें और फिर इसका पालन करें। किसी की पीठ पीछे निंदा व चुगली न करें और न ही परदोषारोपण में लिप्त रहें। न ही किसी से अनावश्यक आशा-अपेक्षाएँ रखें। दूसरों के प्रति जो कर्त्तव्य है, उसका हर स्थिति में निर्वाह करें। कर्त्तव्यनिष्ठा को धर्म का पर्याय मानें। यदि सही ढंग से कर्त्तव्यपालन हुआ तो समझें कि व्यावहारिक अध्यात्म की प्राथमिक सीढ़ी पार हो चली।

नित्य डायरी लेखन को जीवन का अभिन्न अंग बनाएँ; क्योंकि डायरी आपकी सच्ची हितैषी है। डायरी के पन्नों को पलटने पर अपनी स्थिति

का बोध होता है और कितना विकास कर चुके हैं, इसका एहसास होता है।

इसी के साथ अपने दोषों के परिमार्जन और गुणों के संवर्द्धन में डायरी सहायता करती है। मन के तनाव-अवसाद व गुबार को यह हलका करती है। इसके साथ नित्य कुछ लिखने का अभ्यास होता है और अपनी मौलिक लेखनशैली विकसित होती है।

नित्य ध्यान के कुछ पल अवश्य निकालें। प्रारंभ में चंचल मन उछल-कूद करेगा, इधर-उधर भटकेगा, बेचैन होगा, लेकिन यदि दृढ़तापूर्वक ध्यान का अभ्यास करते हैं, तो फिर मन क्रमशः शांत व स्थिर होने लगेगा। ध्यान की गहराइयों में जीवन के उच्चतर आयाम प्रकट होंगे। निश्चित समय व स्थान पर ध्यान का अभ्यास करें। प्रारंभ 5 से 10 मिनट के साथ किया जा सकता है और फिर ध्यान का अभ्यास शनैः-शनैः बढ़ाते जाएँ।

मानवीय चेतना के मर्मज्ञ परमपूज्य गुरुदेव का नित्य सत्संग करें। उनके जीवन, व्यक्तित्व एवं शिक्षाओं के प्रकाश में अपने जीवन को टटोलें। व्यक्ति अपने स्तर पर बहुत कुछ कर सकता है, लेकिन पूर्ण समाधान तो समर्थ गुरु की कृपा की छाँह तले ही संभव होता है। गुरुकृपा का अधिकारी बनने के लिए सच्चे शिष्यत्व का अभ्यास करें। इसके लिए अपने आत्मिक विकास की तीव्र इच्छा के साथ दुःखी, पीड़ित एवं अज्ञानग्रस्त प्राणियों के लिए प्रार्थना करें।

अपने उपेक्षित क्षेत्र में योग्यता का वर्द्धन करें। हर व्यक्ति असीम क्षमताओं का आगार है, लेकिन कम्फर्ट जोन में पड़े रहने के कारण वो प्रायः कुंद पड़ी रहती हैं। अतः अपने व्यक्तित्व के उपेक्षित क्षेत्र पर कार्य प्रारंभ करें और अपने व्यक्तित्व विकास के लिए सबसे महत्त्वपूर्ण किसी एक चीज को लें।

जीवन में आने वाली चुनौतियों का सामना करें, इन्हें अपनी प्रगति का अवसर मानें। आप इन्हें जीवन में इसी रूप में फलित होता देखेंगे। अपनी कमियों को ठीक करते हुए, आवश्यक कौशल का अर्जन करते हुए, अपनी योग्यता के विकास के लिए सतत प्रयासरत रहें। यह एक स्वाभिमान से भरा एवं स्वावलंबी जीवन को सुनिश्चित करने वाला उपक्रम साबित होगा।

प्रकृति के साथ कुछ पल अवश्य बिताएँ। प्रकृति के सान्निध्य में बिताए कुछ पल जीवन में नई ऊर्जा एवं शांति का संचार करते हैं। प्रातः-सायं भ्रमण के साथ इसका क्रम प्रारंभ कर सकते हैं। सप्ताह या माह के अंत में प्रकृति के बीच अधिक समय के लिए विचरण का विशेष संयोग बिठाया जा सकता है। साथ ही प्रकृति को अपनी सच्ची सहचरी, संरक्षिका मानते हुए इसके संरक्षण-संवर्द्धन में भी अपना योगदान अवश्य दें।

पारलौकिक जीवन को भी अपने चिंतन-मनन के दायरे में लाएँ। ईश्वर की कर्म प्रधान व्यवस्था को समझें। इस मरणधर्मा शरीर का नाश तय है और धरती पर जीवन भी सीमित। मृत्यु जीवन का अंतिम सत्य है, इस परमसत्य पर विचार के लिए समय निकालें और इसके प्रकाश में जीवन का सम्यक निर्धारण करें। यह अनावश्यक मोह-आसक्ति तथा भय-असुरक्षा के भाव से मुक्त करेगा और जीवन को सही माने में जीने का आधार देगा।

इस तरह हर दिन को नया जन्म मानकर, पूरे प्राणपण से इसे सफल बनाने में जुटें। मानकर चलें की यह अंतिम दिन है। वर्तमान में जिएँ, भूत को दफना दें। उपरोक्त वर्णित संकल्प-सूत्रों पर अमल करते हुए जीवन निर्माण के कार्य में जुट जाएँ। जीवन में समस्या के समाधान का हिस्सा बनें और नववर्ष 2024 को उपलब्धियों से भरा एक यादगार वर्ष बनाएँ। ❑

पर्व विशेष-मकर संक्रांति

गतिशीलता से स्थिरता की ओर बढ़ने का पर्व

संक्रांति का अर्थ है—गति या चाल। जीवन के रूप में हम जिसे भी जानते हैं, उसमें गति निहित है। हम से पहले जो इस दुनिया में आए, वे चले गए और जो लोग हमारे बाद आने वाले हैं, वे हमारे जाने का इंतजार कर रहे हैं।

यह गति का ही परिणाम है कि इससे जीवन उपजा है, लेकिन सृष्टि में गति है तो उस गति का विराम भी होना चाहिए। दरअसल, निश्चलता या स्थिरता की कोख से ही गति का जन्म होता है, लेकिन गति एक निश्चित बिंदु या सीमा तक ही अच्छी लगती है।

पृथ्वी बेहद सौम्य और खूबसूरत तरीके से घूम रही है—इसी वजह से मौसम आदि बदलते हैं। पृथ्वी की गति बदल जाए, थोड़ी कम या ज्यादा हो जाए तो संसार अस्त-व्यस्त हो जाए। मकर संक्रांति गति के उस अनुशासन का प्रतीक पर्व है।

संक्रांति का अर्थ है—सम्यक बदलाव। बारह राशियों या हिस्सों में बँटे ग्रह-नक्षत्रों और तारामंडलों में तेजी से बदलाव होते रहते हैं। पृथ्वी को केंद्र में रखकर बाँटे गए बारह भागों में रेखांकित किए गए सूर्य के हिसाब से महत्त्वपूर्ण बदलाव होते रहते हैं।

ये प्रभाव पृथ्वी पर दिखाई देते और महसूस होते हैं। बारह राशियों या भागों के हिसाब से साल में कोई बारह संक्रांतियाँ होती हैं, लेकिन जनवरी में होने वाली मकर संक्रांति का सबसे ज्यादा महत्त्व है। संक्रांति का मतलब पृथ्वी की गतिशीलता और जीवन के उस पर निर्भर रहने के बारे में बताना, संस्कारित करना है। मकर संक्रांति के बाद से सर्दियाँ धीरे-धीरे कम होने लगती हैं।

धरती या प्रकृति से जो हम पाते हैं, उस संदर्भ में गति या परिवर्तन का बड़ा महत्त्व है। हमें अपने वर्तमान और भविष्य को पूरी चेतनता और जागरूकता के साथ गढ़ने की जरूरत है। जीवन और जगत् गति और व्यवस्था के अनुरूप नियोजित होना चाहिए। इस संक्रांति का आध्यात्मिक महत्त्व भी है। योग-अभ्यास में लगे लोग जानते हैं कि इन दिनों अपने चित्त और चेतना में ताजगी भरी जा सकती है।

मकर संक्रांति सूर्य को केंद्र में रखकर व्यवस्थित किए गए जीवन का त्योहार है। सूर्य के चारों ओर बिखरे सत्ताईस नक्षत्रों और एक सौ आठ पदों के साथ एक नया चक्र शुरू होता है। इस पुनरावर्तन से गति का महत्त्व रेखांकित होता है। उस गति का उत्सव सूर्य अर्थात शिव का स्मरण भी दिलाता है, जो पूर्ण निश्चल या अचल है।

सूर्य जो पृथ्वी पर जीवन का स्रोत और आधार है—गतिशील न होकर अचल और स्थिर माना जाता है। सूर्य के संबंध में भी कहा जाता है कि वह भी स्थिर नहीं है। वह किसी महासूर्य की परिक्रमा करता है, लेकिन किसी बिंदु पर मान लिया गया कि सूर्य अचल और स्थिर है। हम सूर्य को पृथ्वी से देख रहे हैं और उसे हमने स्थिर माना हुआ है।

पूरा सौरमंडल या पूरी आकाशगंगा गतिशील हो तो भी इन सबसे परे अंतरिक्ष सबको अपने में

समाहित किए हुए है, वह भी पूर्णरूप से स्थिर या अचल है। इस अविचल स्थिर बिंदु की तलाश पूरी होने पर जीवन खिल उठता है। उसे अपना लक्ष्य मिल जाता है। जीवन की गतिशीलता का संकेत भी यही है। गति के केंद्र में स्थिरता होती है, उसी प्रकार जीवन का केंद्र भी पूर्ण स्थिर है। अतः हमें गतिशीलता से स्थिरता की ओर यात्रा करना चाहिए। यही मकर संक्रांति का रहस्य है। ❑

राजा सुरथ हिमवान नामक राज्य के राजा थे। उनका मन बड़ा कोमल था। एक बार उन्होंने एक अपराधी को किसी कारण दंडित किया तो उसे दंड पाते देख उनका मन विक्षुब्ध हो उठा। यह सोचकर कि राजा होने पर दंड तो देना ही पड़ेगा, वे राज्य छोड़कर तपश्चर्या हेतु निकल पड़े।

एक दिन वन में तपस्या करते हुए उन्होंने देखा कि एक बाज अपने पंजों में तोते के बच्चे को ले जा रहा है। करुणावश उन्होंने एक पत्थर बाज को मारा, जिससे तोते का बच्चा तो बच गया, परंतु बाज के प्राण निकल गए। अपने हाथों द्वारा पुनः हिंसा हुई देख उनका मन काँप उठा।

उसी समय महामुनि माण्डव्य वहाँ आ निकले। उन्होंने राजा की मनोव्यथा भाँप ली। वे राजा से बोले—"राजन्! यदि न्याय न किया जाए, कठोरता न बरती जाए तो दुराचारी लोग सज्जनों पर आतंक स्थापित करेंगे और अधर्म का बोलबाला होगा।

"इसलिए अपने मन में से यह भाव निकालकर तुम निष्काम भाव से प्रजा की सेवा करो। यदि किसी के प्रति व्यक्तिगत वैर-भाव से तुम उसे दंड नहीं दे रहे हो तो वह हिंसा में नहीं गिना जाएगा। राजा होने के नाते राज्य में सुशासन स्थापित करना भी तुम्हारे लिए एक प्रभुप्रदत्त दायित्व है।"

राजा सुरथ की समझ में मुनि माण्डव्य का कथन आ गया। वे पुनः राज्य वापस लौट आए और उन्होंने स्वयं को निष्काम भाव से प्रजा की सेवा में निरत कर लिया।

विजय रथ का दिव्य प्रतीक है जीवन

विजय-पथ पर केवल वे धर्मपरायण, साहसी ही अपने कदम रखते हैं, जिनमें जीवन की चुनौतियों का सामना करने की शक्ति होती है। इसलिए विजय पथ पर जीवनरूपी रथ पर आरूढ़ होकर ही आगे बढ़ा जा सकता है।

जीवन एक सुंदर अवसर है। भिन्न दृष्टि में जीवन को संघर्ष भी कहा जाता है। हमारे और संसार के बीच तमाम अंतर्विरोध भी हैं, लेकिन संसार को युद्धक्षेत्र मानने वाले 'विजय के सूत्र' खोजा करते हैं।

गीताकार ने संसार को धर्मक्षेत्र कहा है। गीता 'धर्मक्षेत्र' शब्द से ही प्रारंभ होती है। जीवन युद्ध में अनेक शत्रु हैं। आमने-सामने की लड़ाई युद्ध कहलाती है। शत्रु हम सबको क्षति पहुँचाते हैं। इस तरह क्षति पहुँचाने वाली सारी शक्तियाँ भी शत्रु हैं।

महर्षि पतंजलि ने योगसूत्रों में चित्तवृत्तियों को भी ऐसा ही बताया है। उन्होंने उनकी संख्या पाँच बताई है। युद्ध या संघर्ष में विजय की इच्छा स्वाभाविक है।

पाश्चात्य मान्यता के अनुसार प्रेम और युद्ध में कोई भी कृत्य गलत नहीं है। उनके राष्ट्रजीवन में प्रेम भी युद्ध जैसा है, इसलिए वहाँ प्रेम में भी साजिश या षड्यंत्र का औचित्य है। भारत के राष्ट्रजीवन में युद्ध भी धर्म या कर्त्तव्य है। इसलिए यहाँ युद्ध-विजय के स्वर्णसूत्र में भी धर्म में दर्शन और विज्ञान का समन्वय समाहित है। जीवन में इन सूत्रों की ओर ध्यान देना चाहिए।

प्राचीन युद्धों में रथ एक आवश्यक उपकरण रहा है। रथसवार योद्धा रथी कहलाते थे, जबकि रथविहीन योद्धा असुरक्षित माने जाते थे। अयोध्या नरेश श्रीराम और लंकाधिपति रावण के बीच का युद्ध अत्यंत प्रसिद्ध है। विजय पर्व इसी युद्ध-विजय का लोक-उत्सव है। श्रीराम के पास रथ नहीं था। रावण रथ पर सवार था। तुलसीदास जी रचित रामचरितमानस का यह प्रसंग ध्यानाकर्षित करता है—

रावनु रथी बिरथ रघुबीरा।
देखि बिभीषनु भयउ अधीरा॥

अर्थ स्पष्ट है कि श्रीराम को रथविहीन देखकर सहयोगी विभीषण व्यथित हुए एवं बोले—

नाथ न रथ नहिं तन पद त्राना।
केहि बिधि जितब बीर बलवाना॥

न रथ, न कवच और न पैरों में जूते तो आप रावण जैसे वीर को कैसे जीतेंगे? विभीषण की व्यथा-व्याकुलता स्वाभाविक है। श्रीराम के पास युद्ध के सामान्य उपकरण भी नहीं हैं।

विजयश्री के लिए ऐसे उपकरण जरूरी हैं, लेकिन यहाँ तुलसी का ध्यान भारतीय विवेक के उपकरणों पर है। उन्होंने विभीषण को व्याकुल प्रश्नकर्त्ता व श्रीराम को विजय सूत्र के गुणों का व्याख्याता बनाकर भारतीय जीवनमूल्यों को उचित ही प्रतिष्ठा दी है।

विजयश्री के लिए रथ चाहिए। श्रीराम विभीषण को बताते हैं—विजय दिलाने वाला रथ लोहे का उपकरण मात्र नहीं होता—

सुनहु सखा कह कृपानिधाना।
जेहिं जय होइ सो स्यंदन आना॥

यहाँ विजय रथ दूसरा है। यह रथ श्रेष्ठ जिज्ञासा है। बताते हैं—शौर्य, धैर्य उस रथ के पहिए हैं। सत्य और शील उसके ध्वज हैं। शक्ति, विवेक, योग और लोकहित इस रथ के चार घोड़े हैं।

भक्ति-निष्ठा सारथी है। मुक्तचित्त ढाल है। संतोष तलवार है, बुद्धि प्रचंड शक्ति है और विज्ञान कठोर धनुष है—'**बर बिग्यान कठिन कोदंडा।**' निर्मल एवं अविचल मन तरकश है। एकाग्र चित्त और यम-नियम बाण हैं। विद्वानों, आचार्यों का सम्मान कवच है।

स्थापना है कि इस सबके अतिरिक्त विजय का भिन्न उपाय नहीं है—

एहि सम बिजय उपाय न दूजा।

जिसके पास ऐसा धर्म आच्छादित रथ है, उसे उसके शत्रु नहीं हरा सकते। रामचरितमानस लंकाकांड में वर्णित यह विजय रथ भारतीय जीवनमूल्यों का दिग्दर्शन कराता है। विजय पर्व के उल्लास में इसकी अनुभूति हमारे मन को प्रगाढ़ सांस्कृतिक मूल्यों से जोड़ती है, लेकिन प्रश्न है कि क्या हमारे जीवनमूल्य ही युद्ध-उपकरणों का विकल्प भी बन सकते हैं?

जीवनमूल्य अपनी जगह हैं, उनमें प्रतिबद्धता भारत की प्रकृति है। गीता में भी तमाम दार्शनिक विचार हैं। अंत में संजय बताते हैं कि जहाँ योगेश्वर कृष्ण और धनुर्धर अर्जुन हैं, विजय उसी पक्ष की होगी। यहाँ श्रीकृष्ण के पहले योगेश्वर विशेषण है और अर्जुन के पहले धनुर्धर आता है।

योग, ध्यान, निष्कामता, भक्ति और ज्ञान 'योगेश्वर' के पर्याय हैं। वे जरूरी हैं, लेकिन धनुष जैसे उपकरण भी जरूरी हैं। उसके लिए धनुर्धर शब्द आया है। तुलसीदास भी इस सत्य से परिचित थे।

उन्होंने युद्ध का वर्णन करते हुए आगे कहा—

देवन्ह प्रभुहि पयादें देखा।
उपजा उर अति छोभ बिशेषा॥

पहले श्रीराम को रथहीन देखकर विभीषण दु:खी थे। श्रीराम ने उन्हें विजय रथ के गुण बताए, लेकिन दूसरी बार देवता पीड़ित थे—क्षोभ विशेष पैदा हुआ देवों के मन में। देवता निश्चित ही श्रीराम द्वारा विभीषण को बताए गए विजय रथ से परिचित रहे होंगे, लेकिन इंद्र ने श्रीराम के पास अपना रथ भेज दिया—'**सुरपति निज रथ तुरत पठावा।**' तो क्या देवताओं को श्रीराम वाले आदर्श विजय रथ पर कम विश्वास था?

शौर्य, धैर्य, शील आदि सद्गुणों से युक्त धर्ममय रथ हमारे जीवन-संघर्ष का रूपक है। यह रथ हमारे राष्ट्रजीवन के प्राणों में रचा-बसा है। यहाँ उदात्त चित्त और संसारी पौरुष में कोई टकराव नहीं है।

इसीलिए श्रीराम इंद्र द्वारा भेजे गए सुंदर रथ पर प्रसन्नतापूर्वक बैठ भी गए—

तेज पुंज रथ दिब्य अनूपा।
हरषि चढ़े कोसलपुर भूपा॥

यहाँ 'हरषि चढ़े' ध्यान देने योग्य है। आदर्श जीवनमूल्यों वाला रथ श्रीराम के पास था, लेकिन वे इंद्र द्वारा भेजे गए तेजपुंज रथ पर हर्षपूर्वक ही चढ़े। जीवन एक आयामी नहीं है। संसार माया हो सकता है और मिथ्या भी। माया और संसार में रहने के लिए माया और संसार के उपकरण जरूरी हैं।

माया और संसार से मुक्ति के लिए ज्ञान-विज्ञान का बोध भी बहुत जरूरी है। श्रीराम भारत के मन के मर्यादा पुरुषोत्तम हैं। उन्हें ब्रह्म जानकर लीला करते हुए देखने का अपना आनंद है, लेकिन उन्हें अपना और अपना ही पूर्वज जानकर उनकी मर्यादा पुरुषोत्तम भावभूमि में डूबने का आनंद लेना और भी ज्यादा रम्य है।

संसार जैसा प्रत्यक्ष है, बहुधा वैसा नहीं होता। प्रत्यक्ष कभी-कभी प्रमाण नहीं बनता। इंद्रियबोध हमेशा ठीक सूचना ही नहीं देता। जिज्ञासा बेचैन करती है। मन व्याकुल होता है। दर्शन का जोर प्रत्यक्ष पर है, अनुमान के आधार पर सत्य के शोध पर है।

मन को तब भी जिज्ञासा की बेचैनी प्रशांत न होने दे तो पूर्वकथनों या वैदिक अनुभूतियों की सहायता लेने का भी विकल्प है। मूलभूत प्रश्न है कि हमारा मन भी न माने तो क्या करें?

गीता ने तब ऐसी परिस्थिति के लिए **यथेच्छसि कुरु** अर्थात जो ठीक लगे, इच्छानुसार कर्म का संदेश दिया है। भारतीय परंपरा का चिंतन, दर्शन-विषाद के ऐसे अवसरों पर प्रसाद बनकर चित्त को मधुर आस्वादन से भर देता है। विजय रथ का प्रसंग और रूपक बड़ा प्यारा और न्यारा है। इस रथ की सवारी जीवन को उत्कृष्टता से भर देती है। जीवन में इसी रथ पर चढ़ने का प्रयास करने में सार्थकता है। इसमें लुढ़कने और गिरने का कोई संकट भी नहीं। जो धर्मरूपी इस जीवन रथ पर कुशलतापूर्वक आरूढ़ हो पाता है, उसे ही जीवन संग्राम में विजय भी प्राप्त होती है। ❑

आजीवन सदस्य कृपया ध्यान दें

आपने जब आजीवन सदस्यता स्वीकार की थी, तब से अब तक महँगाई इतनी अधिक बढ़ चुकी है कि पत्रिका की आजीवन सदस्यता का निर्वहन कर पाना कठिन हो रहा है। अब पूर्व की सुरक्षानिधि में आजीवन सदस्यता बनाए रखना संभव नहीं जान पड़ता। जो सदस्य रुपये 150 (सन् 1982) में बने थे, उन्हें अभी तक पत्रिका भेजी जा रही है; जबकि वार्षिक चंदा रुपये 15 (सन् 1982) से बढ़कर रुपये 300 हो गया है—भविष्य में और बढ़ता रहेगा। ऐसी स्थिति में आजीवन सदस्यता को पुरानी शर्तों पर जारी नहीं रखा जा सकेगा।

अब नई व्यवस्था के अनुसार आजीवन सदस्यता 20 वर्ष तक सीमित रहेगी। उसका अब चंदा रुपये 6000/- होगा। हम सबकी यही अपेक्षा है कि जो श्रद्धा-स्नेह का संबंध लंबे समय से बना हुआ है, वह और भी प्रगाढ़ होगा। अखण्ड ज्योति का आलोक आपको एवं अन्य परिजनों को आलोकित करता रहेगा।

इसके लिए हम आपके समक्ष निम्न विकल्प प्रस्तुत कर रहे हैं—

(1) आपका आजीवन शुल्क जो भी जमा है, उसे काटकर शेष रुपया और भेज दें, ताकि आपकी आजीवन सदस्यता (20 वर्षीय) बनी रहे। राशि बैंक ड्राफ्ट/चैक/RTGS/NEFT से भेजी जा सकती है। राशि भेजने के लिए बैंकों का विवरण पत्रिका में पृष्ठ सं. 25 पर दिया गया है।

(2) आपकी आजीवन सदस्यता समाप्त कर दी जाए एवं जमा सुरक्षानिधि वार्षिक चंदा में ट्रांसफर कर दी जाए। उस राशि से वार्षिक चंदा रुपये 300/- के हिसाब से जब तक का चंदा बने अखण्ड ज्योति भेज दी जाए।

(3) यदि किन्हीं कारणोंवश ऐसा संभव न हो पा रहा हो तो अपने बैंक खाते की जानकारी भेजने का अनुग्रह करें, जिससे आपको राशि वापस भेजी जा सके। विवरण मिलने पर आपके खाते में सीधे रुपया भेज दिया जाएगा।

पत्र व्यवहार में अपनी सदस्य संख्या, नाम, पता, फोन नंबर, ई-मेल का उल्लेख अवश्य करें।

आप सबको पत्र द्वारा सूचित किया जा चुका है, संभव है किसी कारणवश पत्र न मिला हो। अपनी सहमति का पत्र डाक/ई-मेल द्वारा भेजने का अनुग्रह करें।

—अखण्ड ज्योति संस्थान, मथुरा-281003

Email-akhandjyoti@akhandyotisansthan.org

अंतर्मन की पुकार है प्रार्थना

प्रार्थना से हमारे भीतर विपत्तियों से लड़ने की ऊर्जा आ जाती है और हम संकल्पों को पूरा करने की ओर अग्रसर होते हैं। कई बार हमारे चारों ओर विपत्ति के बादल मँडराने लगते हैं, निराशा का अंधकार छा जाता है। लगता है कि कोई हमारे दरद को महसूस नहीं करता, उस समय हम किसी ऐसे की तलाश करते हैं, जिससे हम अपनी बात कह सकें और वह हमारे दु:ख दूर कर सके। तब हमारे संबल की तलाश ईश्वर पर जाकर खतम होती है।

ईश्वर का संबल मिलते ही हमारा आत्मबल मजबूत होने लगता है। विपत्तियाँ भले ही नष्ट न हों, लेकिन हमारे भीतर उनसे लड़ने की अपार ऊर्जा आ जाती है। इस ऊर्जा से हम न सिर्फ विपत्तियों पर विजय प्राप्त कर लेते हैं, बल्कि अपने संकल्पों को पूरा करने की ओर अग्रसर भी होते हैं।

प्रार्थना के लिए किसी भाषा या व्याकरण की ज़रूरत नहीं है। आवश्यकता है पूर्ण आस्था के साथ ईश्वर के समक्ष संपूर्ण समर्पण। ईश्वर के प्रति हमारा विश्वास हमारे भीतर आत्मबल पैदा करता है। प्रार्थना का अभिप्राय यह नहीं है कि हमारी इच्छा पूर्ण हो ही जाए। यह तो हम पर है कि ईश्वर का संबल लेकर अपने आत्मबल को हम कितना मजबूत बना लेते हैं।

प्रार्थना का तात्पर्य जीवात्मा की परमात्मा के समक्ष निजभाव की अभिव्यक्ति से है। ऐसे में मन को ईश्वर के प्रति केंद्रित करना होगा, तभी हम उनसे अपने मन की बात कह सकेंगे। ऐसा करने से न सिर्फ हम अपनी कुंठाओं का विसर्जन कर देते हैं, बल्कि हमें ध्यान का भी अभ्यास होता है। ध्यान मन को भटकने से नियंत्रित करता है। हम समस्याओं को व्यापक फलक पर देखने लगते हैं और उनके मूल में जाकर हम उनके समाधान को खोज लेते हैं। इससे हमें संकट से मुक्ति मिल जाती है। प्रार्थना के संबंध में अनेकों पौराणिक कथाएँ हैं। भक्त प्रह्लाद की पुकार पर भगवान नृसिंह रूप धारण करके खंभे से प्रकट हो गए थे। कौरवों की सभा में जब द्रौपदी का चीर-हरण होने लगा, तब उसकी पुकार पर भगवान वस्त्ररूपी कवच बन गए, जिसे महाबली दु:शासन भी तोड़ न सका।

गज को जब तक अपनी ताकत का अभिमान था, वह ग्राह (मगरमच्छ) से लड़ता रहा, पर जब गज को लगा कि वह अपने बल पर अपने प्राणों की रक्षा नहीं कर पाएगा, तब उसने श्रीहरि को पुकारा। भक्तवत्सल भगवान ने उसकी रक्षा की और 'गजेंद्रमोक्ष' एक आदर्श प्रार्थना बन गई। इन कथाओं में देखा जाए तो भगवान ने उन्हीं लोगों की सहायता की, जिनका आत्मबल चरम पर रहा, जिन्होंने परिस्थितियों से समझौता नहीं किया।

मनोवैज्ञानिक मानते हैं कि प्रार्थना से अंतर्मन की सोई हुई ऊर्जा सक्रिय हो जाती है, जिससे असाध्य रोग तक ठीक हो जाते हैं। प्रार्थना एक प्रकार का योग है, जिसका अभ्यास प्रतिदिन करना चाहिए। फिर हम रोज प्रार्थना के परमानंद-रस का आस्वादन लेंगे और प्रार्थना का प्रतिफल भी देख सकेंगे। जब अंतर से करुण पुकार उठती है तो वही स्वर प्रार्थना का पुष्प बनकर परमात्मा के चरणों में अर्पित हो जाता है। प्रार्थना से असंभव संभव में परिवर्तित होता है। अत: हमें भावभरे मन से प्रार्थना करनी चाहिए। ❑

भक्त की भक्ति से छूट जाता है संसार

जब भक्त का हृदय भगवत्प्रेम से सराबोर हो उठता है, तब भक्त की आध्यात्मिक आभा अनायास ही हर किसी को और विशेषकर साधकों को अपनी ओर आकर्षित करती है और उनके आभामंडल में प्रवेश करते ही हृदय में दैवी शीतलता और आनंद की अनुभूति होती है।

मध्यकाल में मध्य प्रदेश के बालाघाट जिले में एक छोटे से गाँव में जन्मे गणेशनाथ जी भी एक ऐसे ही भगवद्भक्त थे, जिनके सान्निध्य में हर किसी को शांति, शीतलता और आनंद की अनुभूति होती थी। पूर्वजन्म के संस्कार व माता-पिता से प्राप्त शिक्षाओं के कारण बचपन से ही उनका भगवत्प्रेम परिलक्षित होने लगा था।

उनके माता-पिता बचपन से ही उन्हें भगवत्प्रेम के प्रति प्रोत्साहित करते और गणेशनाथ भगवान का नाम ले-लेकर मानो आनंद में नाचने लगते। पिता उन्हें बचपन से भगवद्भक्ति के द्वारा मानव जीवन को सफल करने को प्रेरित करते। वे शास्त्रों-पुराणों में वर्णित भगवान व भक्तों से जुड़ी रोचक कहानियाँ गणेशनाथ को सुनाया करते और वे रुचिपूर्वक उन कथाओं को सुना करते।

रात में सोते समय उनकी माता भी उन्हें भगवान की रोचक कथाएँ, कहानियाँ सुनाया करतीं और बालक गणेशनाथ भगवान की कथाएँ सुनते-सुनते ही निद्रा में चले जाते। प्रातः जब उनके माता-पिता भगवद्उपासना करने बैठते, धार्मिक ग्रंथों का स्वाध्याय करते तो बालक गणेशनाथ भी अपने माता-पिता के पास जाकर बैठते। इस प्रकार एक बड़े ही दिव्य आध्यात्मिक वातावरण में उनका पालन-पोषण हुआ।

भगवद्भजन, भगवत्प्रेम, वैराग्य आदि के संस्कार गणेशनाथ को अपने माता-पिता से बखूबी प्राप्त हुए। दैवी इच्छा कहें या कुछ और; गणेशनाथ की युवावस्था प्रारंभ होने से पूर्व ही उनके माता-पिता परलोकवासी हो गए। कहने को घर में गणेशनाथ अकेले रह गए, पर भगवत्प्रेम और वैराग्य के संस्कार जिसके साथ हों, भला वह अकेला कैसे हो सकता है?

इसलिए घर में अकेले होते हुए भी वे निर्भीक, निर्द्वंद्व थे। उनका हृदय हरिनाम रस पीने को अब और भी आकुल हो उठा। वे सत्संग और भजन के लिए उत्सुक हो उठे। फिर क्या था? वस्त्र के नाम पर उन्होंने बस एक लँगोटी पहन ली, फिर सरदी हो या गरमी या फिर बरसात हो, वे सदैव मात्र लँगोटी ही धारण किए रहते।

वे भगवान का नाम स्मरण करते, कीर्तन करते, पद गाते और भगवत्प्रेम में मतवाले होकर, आनंदमग्न होकर नृत्य करने लगते। भगवन्नामस्मरण, कीर्तन, भगवत्प्रेम के प्रभाव से उनके भीतर वैराग्य की भावना और भी बलवती होती गई। वे प्रायः दिन भर जंगल में जाकर एकांत में बैठकर उच्चस्वर से भगवन्नाम उच्चारण और कीर्तन करते और रात्रि को घर लौट आते।

रात को गाँव के लोगों को भगवत्कथा सुनाते और कीर्तन करते। वर्षों बाद वे गाँव छोड़कर पण्ढरपुर चले गए और वहीं भगवद्स्मरण, कीर्तन, सत्संग आदि करने लगे। संयोगवश एक बार छत्रपति शिवाजी पण्ढरपुर पधारे। तब तक गणेशनाथ जी अपने भगवत्प्रेम, वैराग्य व संकीर्तन प्रेम के कारण दूर-दूर तक चर्चित हो चुके थे।

लोग दूर-दूर से उनके दर्शन व सत्संग को आते थे, अतः वहाँ पधारने पर शिवाजी महाराज भी उनका दर्शन करने आए। उस समय गणेशनाथ जी अपने हृदय में भगवान की मधुर-मनोहर छवि का ध्यान करते हुए, भगवन्नाम स्मरण और कीर्तन करतें हुए नृत्य कर रहे थे।

नृत्य करते-करते बहुत रात बीत गई, पर भगवत्प्रेम में डूबे गणेशनाथ को दिन-रात क्या अपने शरीर की सुध-बुध ही कहाँ थी। शिवाजी भी उनके इस भगवत्प्रेम व भगवद्भाव को देखकर आह्लादित थे और उन्हें शांतभाव से देख रहे थे।

जब अचानक उनका कीर्तन समाप्त हुआ तो शिवाजी ने इनके चरणों में प्रणाम कर उनसे अपने राजशिविर में रात्रि-विश्राम करने की विनम्र प्रार्थना की।

भक्त गणेशनाथ बड़े संकोच में पड़ गए, उनके आग्रह को अस्वीकार भी करना चाहा, पर शिवाजी के बार-बार प्रेम-निवेदन करने पर अंततः वे उनके आग्रह को स्वीकार कर उनके साथ चल दिए, परंतु वहाँ से चलते हुए बहुत से कंकड़ चुनकर उन्होंने अपने वस्त्र में बाँध लिए।

"इन कंकड़ों का क्या होगा?"—छत्रपति शिवाजी ने आश्चर्य से पूछा। तब गणेशनाथ बोले—"सुख-भोग और ऐश्वर्य के बीच रहते हुए भी ये कंकड़ ही मुझे भगवान का स्मरण दिलाएँगे।"

राजशिविर में गणेशनाथ के आदर-सत्कार की बहुविध व्यवस्था की गई। स्वयं शिवाजी ने सुगंधित जल से उनके चरण पखारे, इत्र लगाए, स्वर्णथाल में उन्हें विविध प्रकार के स्वादिष्ट व्यंजन परोसे गए और उनके रात्रि-विश्राम के लिए स्वर्ण के पलंग पर कोमल गद्दे के ऊपर सुगंधित पुष्प बिछाए गए।

यह देखकर गणेशनाथ जी तो मानो सन्न रह गए। उन्हें सुख-भोग के ये सारे पदार्थ मानो जलती हुई अग्नि के समान प्रतीत हो रहे थे।

शिवाजी जैसे सत्पुरुष, राष्ट्रभक्त के आग्रह-प्रेम के कारण किसी प्रकार थोड़ा-सा कुछ खाकर वे विश्राम करने गए, पर सुकोमल शय्या पर शयन करने से पूर्व उन्होंने अपने साथ लाए हुए कंकड़ों को पुष्पों के ऊपर बिछाया एवं फिर उसी पर बैठ गए।

स्वयं को सुख-भोगों के बीच पाकर वे मन-ही-मन कहने लगे—"हे भगवान! हे पाण्डुरंग! हे मेरे स्वामी! अवश्य ही मेरे हृदय के किसी कोने में इन सुख-भोगों के प्रति कोई आसक्ति या इसे पाने की मेरी कोई सूक्ष्म लालसा रही होगी, तभी तो तुम मुझे यहाँ लाए हो। हे विट्ठल! मुझे ये भोग-पदार्थ, ये सुख-भोग, नरक की यंत्रणा जैसे जान पड़ते हैं। मुझे तो बस, आपसे एक ही आशा है और वह है—देना है तो दीजिए, जनम-जनम का साथ, जनम-जनम का निजप्रेम, भगवत्प्रेम, भगवद्स्मरण। इसके सिवा गणेशनाथ आपसे कुछ नहीं चाहता।"

इस प्रकार भगवद्स्मरण करते हुए ही रात बीती। प्रातः शिवाजी ने आकर उनके दर्शन किए। उन्हें प्रणाम किया और पूछा—"महाराज! आप क्या रात्रि-विश्राम सुखपूर्वक कर पाए या नहीं?"

तब गणेशनाथ जी बोले—"जो क्षण विट्ठल का नाम स्मरण करते हुए बीते, वही सफल है। आज की रात भगवद्स्मरण, हरिस्मरण करते हुए व्यतीत हुई। अतः वह निस्संदेह सफल हुई।"

भक्त गणेशनाथ के दिव्य भगवद्भाव को सुनकर शिवाजी के नेत्रों से आँसू बहने लगे। उन्होंने यह महसूस किया कि उन्हें एक साधु को भौतिक सुख-भोग के बीच रात्रि विश्राम करने का आग्रह नहीं करना चाहिए था।

हालाँकि यह सच था कि शिवाजी ने यह सब एक संत के प्रति अपने प्रेम व सम्मान के कारण ही किया था। भक्त गणेशनाथ भी उनके हृदय की निर्मलता व प्रेम को भली भाँति जानते थे। इसलिए

तो उन्होंने न चाहते हुए भी शिवाजी के आग्रह को स्वीकार किया था। उन्होंने प्रेमभरी दृष्टि से शिवाजी को देखा और उन्हें आशीष दिया।

उक्त प्रसंग में उल्लेखनीय यह है कि लोक-ख्याति अथवा लोक-प्रतिष्ठा पाने की लालसा भी भगवन्मार्ग में एक बहुत बड़ा विघ्न है। गणेशनाथ जी जैसे परम वैरागी भक्त इन विघ्नों से निस्संदेह अछूते रहे, पर सामान्य साधक सुख-भोग पाने की लालसा के कारण साधना से विचलित होने लगते हैं।

लोक-प्रतिष्ठा मिलने पर साधक बड़ी ही शीघ्रता से मोह में पड़ता है और उसके मन में लोक-प्रतिष्ठा, लौकिक-सुखभोग पाने की लालसा और भी तीव्र होती जाती है और अंततः उसका पतन होता है। इसलिए साधकों को इन चीजों से बचे रहना चाहिए।

यदि कहीं लोक-प्रतिष्ठा मिलती भी है तो उसे उसके प्रति मोह नहीं करना चाहिए। इसलिए ऐसा कहा गया है कि साधक को मान-सम्मान व प्रतिष्ठा को शूकर की विष्ठा समान मानकर उनसे दूर रहना चाहिए।

भक्त गणेशनाथ इन चीजों के प्रति सदैव सावधान रहते थे। पण्ढरपुर में उनकी जय-जयकार होने लगी थी। लोग उनके दर्शन व सत्संग को आने लगे थे। उनकी लोक-प्रतिष्ठा बढ़ने लगी थी, पर लोक-प्रतिष्ठा को उन्होंने अपने भगवन्मार्ग में कभी भी विघ्न-बाधा नहीं बनने दिया।

अपने प्रति लोगों के बढ़ते हुए प्रेम व सम्मान को वे मानसिक रूप से भगवान के चरणों में समर्पित कर उन चीजों से सदैव अछूते बने रहे। पर हाँ! सत्य यह भी है कि जब फूल खिलेंगे तो सुगंध तो फैलेगी ही। उससे आकर्षित होकर भगवान के प्रेमी भक्त गणेशनाथ जैसे भगवद्भक्त के प्रति आकर्षित होंगे ही।

इसलिए गणेशनाथ जी जंगल में एकांत में बैठे होते तब भी लोग उनके पास एकत्र होने लगते, उनके दर्शन करते, उनके साथ कीर्तन करते और आनंदमग्न हो जाते। अंततः गणेशनाथ जी के प्रेम ने विट्ठल भगवान को दर्शन देने को बाध्य कर दिया। उन्हें भगवान के दिव्यस्वरूप के दर्शन हुए। दर्शन पाने के बाद तो मानो गणेशनाथ जी हजारों लोगों से घिरे रहकर भी ब्राह्मी भावदशा में ही डूबे रहते। वे उठते-बैठते, खाते-पीते, हँसते-बोलते सदैव ब्रह्मभाव में ही होते।

संसार में होकर भी वे संसार से अछूते रहते। ब्राह्मी भावदशा में वे जिसे भी छू देते, वह वहीं उन्मत्त होकर नाचने लगता। उनके आध्यात्मिक आभामंडल में पहुँचकर, उनके पास पहुँचकर लोग परम आध्यात्मिक ऊर्जा की अनुभूति पाते, भगवान का नाम लेने लगते। सभी भक्तजन भक्त गणेशनाथ जी के सान्निध्य में भगवान के प्रेम में उन्मत्त होकर, उनके साथ-साथ कीर्तन करने को विवश हो जाते।

वास्तव में संत और भक्त ऐसे ही होते हैं जिनके सान्निध्य में पहुँचते ही मनुष्य को संसार रस फीका जान पड़ता है और वह भगवत्प्रेम रस से सराबोर हो अपने जीवन को धन्य कर लेता है। वास्तव में बड़ी अद्भुत थी संत गणेशनाथ की भगवद्भक्ति। ❑

मोक्ष अर्थात मुक्ति। कषाय-कल्मषों से मुक्ति, दोष-दुर्गुणों से मुक्ति, भव-बंधनों से मुक्ति। यही भव-बंधन हैं, जो स्वतंत्र अस्तित्व से लेकर जन्मे मनुष्यों को लिप्साओं और कुत्साओं के रूप में अपने बंधनों में बाँधते हैं। यदि आत्मशोधनपूर्वक इन्हें हटाया जा सके, तो समझना चाहिए कि जीवित रहते हुए ही मोक्ष की प्राप्ति हो गई।

— परमपूज्य गुरुदेव

नवयुग

नवयुग का आगमन देवत्व की प्रधानता को लेकर के आएगा। नववर्ष की पूर्व वेला में यह स्मरण अनिवार्य हो जाता है कि जब नवयुग का आगमन होगा तो उसमें वे प्रयत्न साकार होंगे, जो मनुष्य में देवत्व के उदय को सार्थक कर सकें।

देवता वहीं बसते हैं, जहाँ स्वर्ग होता है और जहाँ देवता वास करने लगते हैं, वह स्थान स्वत: ही स्वर्ग में परिणत हो जाता है। आने वाले दिनों में उत्कृष्ट व्यक्तियों द्वारा जो स्वर्णिम वातावरण बनेगा, उसे ही धरती पर स्वर्ग के अवतरण की संज्ञा दी गई है।

जब सूक्ष्मजगत् में ऐसी परिस्थितियों का निर्माण होता है तो सुसंस्कारी आत्माएँ अपने भीतर वैसी ही हलचलें उभरती देख सकती हैं, जैसी कभी समुद्रमंथन के समय में उठी होंगी। ऐसे अवसरों पर परिष्कृत अंतराल में ऐसी उमंगें उठती हैं—जिनका अनुकरण करने पर व्यक्ति को देवोपम बनने का अवसर मिल जाता है।

वैसे तो ईश्वरीय अनुदान सदा ही सत्पात्रों पर बरसते हैं, परंतु कुछ विशेष समयों में ऐसा होने की संभावना और ज्यादा बढ़ जाती है। ऐसे समयों में दैवी प्रवृत्ति की आत्माएँ अज्ञात चेतना से प्रेरित होकर आत्मकल्याण एवं लोक-मंगल के कार्यों में सहज ही निरत हो जाती हैं।

ज्वारभाटे हर रोज नहीं आते, चंद्रमा की घटती-बढ़ती कलाओं के अनुसार उनके समय निर्धारित होते हैं। आंतरिक उमंगों और ईश्वरीय प्रेरणाओं पर भी यह बात सत्य सिद्ध होती है।

वे भी मनुष्य की स्व-उपार्जित नहीं होतीं, बल्कि उनके पीछे अविज्ञात चेतना का ऐसा प्रवाह कार्य करता है कि उसका प्रवाह होने पर मनुष्य का, विशेष रूप से सुपात्रों का चिंतन ही नहीं, बल्कि भावनाएँ एवं आचरण भी ऐसी दिशा में बढ़ने लगते हैं, जिनके लिए कोई पूर्व तैयारी नहीं की गई थी।

सुनिश्चित है कि लोगों की आस्थाओं को युग के अनुरूप विचारधारा को स्वीकारने हेतु उचित मोड़ दिया जा सके तो कोई कारण नहीं कि सुखद भविष्य का, उज्ज्वल परिस्थितियों का प्रादुर्भाव संभव न हो सके। यह प्रवाह बदलकर उलटे को उलटकर सीधा बनाने की तरह भागीरथी कार्य है, किंतु असंभव नहीं, पूर्णत: संभव है। —*परमपूज्य गुरुदेव*

वर्तमान दिनों के लिए भी यह तथ्य सत्य सिद्ध होता है। सत्पात्रों से इन दिनों यह विशेष प्रार्थना की जा रही है कि वे समय की माँग को पहचानें, धरती पर स्वर्णिम वातावरण को तैयार करने एवं सतयुग की वापसी करने में अपनी भूमिका का निर्वहन करें।

ऐसा करने वाले इस पथ पर चलते ही यह अनुभव करेंगे मानो अदृश्य से अप्रत्याशित अनुदान उन पर बरस पड़ा हो। ❑

▶'नारी सशक्तीकरण' वर्ष◀

अद्भुत है आचार्य शंकर की गंगोत्तरी धाम यात्रा

बदरीनाथ धाम व केदारनाथ की यात्रा पूरी कर आचार्य शंकर अपने शिष्यों के साथ वैदिक धर्म की ध्वजा लहराते-फहराते हुए, वैदिक धर्म का प्रचार-प्रसार करते हुए गंगोत्तरी धाम की ओर चल पड़े। गंगोत्तरी धाम जाने का मार्ग बड़ा ही दुर्गम था। कहीं ऊँचे-ऊँचे पर्वतों की कठिन चढ़ाई थी तो कहीं हिंसक जीवों से भरे भयानक वन-क्षेत्र भी थे, पर आचार्य शंकर उन सभी विघ्न-बाधाओं को पार करते हुए आगे बढ़े जा रहे थे।

केदारगंगा और भागीरथी के मिलन की अद्भुत छवि को देखते हुए वे सभी आगे बढ़े जा रहे थे। भयानक वन-क्षेत्र से गुजरते हुए हिंसक जीवों के भयानक शब्द सुनाई दे रहे थे। उधर शीतलहर शरीर को सुन्न किए दे रही थी, पर आचार्य शंकर अपने शिष्यों को शिक्षाप्रद कहानियाँ सुनाते हुए, धर्मोपदेश देते हुए, साहस बँधाते हुए आगे ही बढ़ते जा रहे थे।

आचार्य शंकर के अदम्य साहस और उत्साह को देखकर ज्योतिर्धाम नरेश और उनके कर्मचारी हतप्रभ और अचंभित-से हो जाते। एक ओर भयानक घाटियाँ, दूसरी ओर ऊँचे-ऊँचे पर्वत तो कहीं बरफ से ढकी पाषाण शिलाएँ थीं। बरफ से ढकी पाषाण शिला पर पाँव रखते ही आगे बढ़ने के बजाय, कभी-कभी पाँव फिसलकर प्राणों को ही संकट में डाल देते, पर सभी कठिनाइयों को पार करते हुए आचार्य शंकर मुस्कराते हुए आगे चल रहे थे।

यदि कोई संकट आए तो सबसे पहले वे उसे सहें—शंकराचार्य के हृदय में यह भावना भरी हुई थी। उधर गुरुभक्त पद्मपाद अपने गुरु की जीवन-रक्षा के लिए अपनी जान की परवाह किए बगैर अपने गुरु के साथ छाया की तरह साथ-साथ चल रहे थे और कई संकट भरे स्थानों पर अपने प्राणों को संकट में डालकर पद्मपाद ने अपने गुरु की रक्षा की थी। सचमुच ऐसा गुरुप्रेमी, गुरुभक्त कोई विरला ही होता है।

साथ चल रहे ज्योतिर्धाम नरेश पद्मपाद के गुरुप्रेम को देखकर अभिभूत थे और यह समझ चुके थे कि पद्मपाद अपना सर्वस्व अपने गुरु को समर्पण कर चुका है और इसी कारण पद्मपाद पर आचार्य शंकर की विशेष कृपा है और सच भी तो यही है कि बिना समर्पण किए, बिना त्याग किए, कोई भी साधक साधना-पथ पर कहाँ खरा उतरा है, पर पद्मपाद गुरु के प्रति अपने सर्वस्व समर्पण के कारण गुरु के कृपापात्र बन चुके थे।

पद्मपाद को कष्टों की कसौटी पर जितना कसा गया, वह उतने ही खरे निकलते गए। उधर चलते-चलते अब सूर्यास्त होने को था। विश्राम की कहाँ व्यवस्था हो, इस पर सभी लोग विचार कर रहे थे। तभी उधर पद्मपाद गुफाओं में और टूटे देवालय खंडहरों में ठहरने का प्रबंध कर वापस आ रहे थे।

शंकराचार्य पद्मपाद के बताए हुए विश्रामस्थल पर अपने शिष्यों सहित चल पड़े। रात्रि विश्राम कर सभी प्रात:काल जागकर अपनी दिनचर्या पूरी कर आगे के लिए चल पड़े। इस प्रकार सूर्यास्त होते ही सभी गुफाओं में या प्राचीन मंदिरों के खंडहरों में रात्रि विश्राम करते और प्रात:काल तैयार होकर आगे की ओर चल पड़ते।

इस प्रकार यात्रा करते हुए, विश्राम करते हुए, कई दिन लगातार चलने के पश्चात सभी तीर्थयात्री भागीरथी के उद्गमस्थल की ओर बढ़े चले जा रहे थे।

अंतत: वे सभी गंगोत्तरी में सूर्यकुंड, विष्णुकुंड, ब्रह्मकुंड आदि तीर्थों के दर्शन करते हुए विशाल भागीरथ शिला के पास पहुँचे। यह वह शिला है, जिस पर बैठकर भगीरथ ने गंगा जी को मृत्युलोक में लाने के लिए घोर तपस्या की थी।

भगीरथ की तपस्या से प्रसन्न होकर ही गंगा जी इस धरा पर अवतरित हुई थीं। इसलिए गंगा पहले भागीरथी कहलाईं। चलते-चलते अब भागीरथी नदी दिखाई देने लगी थी। युगों-युगों से अपने अमृत जल से इस धरा को धन्य करती हुई भागीरथी लगातार आगे बढ़ती जा रही थीं।

गंगा अब भी कितने गाँव, नगर, महानगरों को पवित्र करती हुई, वन-उपवन में हरियाली व सौंदर्य भरती हुई आगे-ही-आगे बढ़ती चली जा रही हैं, यह देखकर सभी तीर्थयात्री आह्लादित थे, आनंदित थे।

भागीरथी गंगादेवी लहराती, बलखाती, पर्वतस्थल से आगे की ओर बढ़ी जा रही है, यह देखकर सभी तीर्थयात्री गद्गद थे। तभी पद्मपाद ने अंजलि में गंगाजल लेकर अपने गुरु के चरण धोए। शंकराचार्य ने हाथ-मुँह धोकर जलपान किया और प्रसन्न होकर तट पर बैठकर गंगा की स्तुति करने लगे।

माँ गंगा की स्तुति करते हुए आचार्य शंकर ध्यानस्थ हो गए और उनके हृदय से यह हृदयोद्गार निकल पड़े कि 'हे सुखदायिनी, माता भागीरथी वेदों में आपके पवित्र सलिल(जल) की महिमा का वर्णन है। मैं आपकी अनंत महिमा नहीं जानता। हे कृपामयी! मैं अज्ञानी हूँ, मेरी रक्षा कीजिए। हे माता! आपके अमल सलिल का जिसने पान किया है, वह अवश्य ही परमपद को प्राप्त होगा। जो आपका भक्त है, उसे देखने तक का अधिकार यम को नहीं है। हे भगवती! मेरे रोग-शोक, पाप-पुण्य, कुमति-कलाप हरण कीजिए। हे त्रिभुवन श्रेष्ठ, आप ही एकमात्र मेरी गति हैं। हे भुवनेश्वरी, त्रिभुवन पावनी, सर्वजन प्रशसिते देवि! जलमयि! जो मनुष्य प्रतिदिन इस पवित्र गंगा स्तोत्र का पाठ करता है उसे अवश्य ही सर्वत्र जय लाभ होता है।'

इस प्रकार ध्यानमग्न आचार्य शंकर भागीरथी की स्तुति कर रहे थे और उनके श्रद्धालु शिष्य व भक्त उनकी ओर देख रहे थे और मन-ही-मन सोच रहे थे कि गुरुदेव की गंगाभक्ति कितनी मर्मस्पर्शी है? ब्रह्मज्ञ गुरुदेव ने गंगा के माहात्म्य का कितना अद्भुत गायन किया है।

इस प्रकार भागीरथी गंगा की स्तुति-वंदना करके आचार्य शंकर आगे की ओर चल पड़े। लगातार बरफ गिरने से रास्ता दुर्गम हो चला था। चारों ओर हिमशिखर दिखाई पड़ रहे थे। शीत के कारण सबके हाथ-पाँव सुन्न हुए जा रहे थे, पर शंकराचार्य जी साहसपूर्वक आगे ही बढ़ते चले जा रहे थे। वे अब गंगोत्तरी की यात्रा पूरी कर गोमुख की ओर बढ़ चले थे। ❑

अहं वा सर्वभूतेषु सर्वभूतान्यथो मयि।
इति ज्ञानं तथैतस्य न त्यागो न ग्रहो लयः ॥

—अष्टावक्र गीता

अर्थात मैं निश्चय ही सब भूतों में हूँ, सब भूत मुझमें हैं। इस कारण से मैं इनमें लय नहीं हूँ और न ही इसे त्यागा जाना है और न ही कुछ ग्रहण किया जाना है। यही ज्ञान है।

तिथियों का ज्योतिषीय महत्त्व

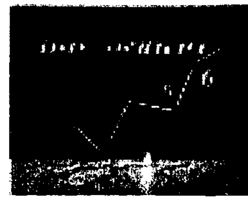

ज्योतिष शास्त्र में तिथियों का बहुत महत्त्व है। तिथियों के आधार पर मुहूर्त निकाले जाते हैं और उनके अनुसार विभिन्न कार्य किए जाते हैं।

प्रतिपदा तिथि—प्रतिपदा तिथि में गृह निर्माण, गृहप्रवेश, वास्तुकर्म, विवाह, यात्रा, प्रतिष्ठा, मांगलिक कार्य आदि सभी मंगल कार्य किए जाते हैं।

कृष्ण पक्ष की प्रतिपदा में चंद्रमा को बली माना गया है और शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा में चंद्रमा को निर्बल माना गया है। इसलिए शुक्ल पक्ष की प्रतिपदा में विवाह, यात्रा, व्रत, प्रतिष्ठा, सीमांत, चूड़ाकर्म, वास्तुकर्म तथा गृहप्रवेश आदि कार्य नहीं करने चाहिए।

द्वितीया तिथि—इस तिथि में विवाह मुहूर्त, यात्रा करना, आभूषण खरीदना, शिलान्यास, देश अथवा राज्य संबंधी कार्य, वास्तुकर्म, उपनयन आदि कार्य करना शुभ माना जाता है, परंतु इस तिथि में तेल लगाना वर्जित है।

तृतीया तिथि—तृतीया तिथि में शिल्पकला अथवा शिल्प संबंधी अन्य कार्यों को, सीमन्तोनयन, चूड़ाकर्म, अन्नप्राशन, गृहप्रवेश, विवाह, राज-संबंधी कार्य, उपनयन आदि शुभकार्यों को संपन्न किया जा सकता है।

चतुर्थी तिथि—सभी प्रकार के बिजली के कार्य, शत्रुओं को हटाने के कार्य, अग्नि संबंधी कार्य, शास्त्रों का प्रयोग करना आदि कार्यों के लिए यह तिथि अच्छी मानी गई है।

पंचमी तिथि—सभी प्रवृत्तियों के लिए यह तिथि उपयुक्त मानी गई है। इस तिथि में किसी को ऋण देना वर्जित माना गया है।

षष्ठी तिथि—युद्ध में उपयोग में लाए जाने वाले शिल्पकार्यों का आरंभ, वास्तु कर्म, गृहारंभ, नवीन वस्त्र पहनने जैसे शुभ कार्य इस तिथि में किए जा सकते हैं। इस तिथि में तैलाभ्यंग, अभ्यंग, पितृकर्म, आवागमन, काष्ठकर्म आदि कार्य वर्जित हैं।

सप्तमी तिथि—इस तिथि में विवाह मुहूर्त, संगीत संबंधी कार्य, आभूषणों का निर्माण और नवीन आभूषणों को धारण किया जा सकता है। यात्रा, वधू-प्रवेश, गृह-प्रवेश, राज्य संबंधी कार्य, वास्तुकर्म, चूड़ाकर्म, अन्नप्राशन, उपनयन संस्कार आदि सभी शुभ कार्य भी इस तिथि में किए जा सकते हैं।

अष्टमी तिथि—लेखन कार्य, युद्ध में उपयोग में आने वाले कार्य, वास्तुकार्य, शिल्प संबंधी कार्य, रत्नों से संबंधित कार्य, आमोद-प्रमोद से जुड़े कार्य, अस्त्र-शस्त्र धारण करने वाले कार्यों का आरंभ इस तिथि में किया जा सकता है।

नवमी तिथि—नवमी तिथि में शिकार करने का आरंभ करना, जुआ खेलना, शस्त्र निर्माण करना, निर्माण कार्य तथा सभी प्रकार के क्रूर कर्म किए जा सकते हैं।

दशमी तिथि—दशमी तिथि में राजकार्य अर्थात वर्तमान समय में सरकार से संबंधी कार्यों का कार्य आरंभ किया जा सकता है। हाथी-घोड़ों से संबंधित कार्य, विवाह, संगीत, वस्त्र, आभूषण, यात्रा आदि इस तिथि में किए जा सकते हैं। गृह-प्रवेश, वधु-प्रवेश, शिल्प, अन्नप्राशन, चूड़ाकर्म, उपनयन संस्कार आदि कार्य इस तिथि में किए जा सकते हैं।

एकादशी तिथि—एकादशी तिथि में व्रत, सभी प्रकार के धार्मिक कार्य, देवताओं का उत्सव, सभी प्रकार के उद्यापन, वास्तु कर्म, युद्ध से जुड़े कर्म, शिल्प, यज्ञोपवीत, गृह निर्माण का आरंभ और यात्रासंबंधी कार्य किए जा सकते हैं।

द्वादशी तिथि—इस तिथि में विवाह तथा अन्य शुभकर्म किए जा सकते हैं। इस तिथि में तैलमर्दन, नए घर का निर्माण करना तथा नए घर में प्रवेश तथा यात्रा इत्यादि का त्याग करना चाहिए।

त्रयोदशी तिथि—संग्राम से जुड़े कार्य, सेना के उपयोगी अस्त्र-शस्त्र, ध्वज-पताका के निर्माण संबंधी कार्य, राज-संबंधी कार्य, वास्तु कार्य, संगीत विद्या से जुड़े कार्य इस दिन किए जा सकते हैं। इस दिन यात्रा, गृह-प्रवेश, नवीन वस्त्राभूषण तथा यज्ञोपवीत धारण जैसे शुभ कार्यों का त्याग करना चाहिए।

चतुर्दशी—चतुर्दशी तिथि में सभी प्रकार के क्रूर तथा उग्र कर्म किए जा सकते हैं। इस तिथि में यात्रा करना वर्जित है। चतुर्थी तिथि में किए जाने वाले कार्य भी इस तिथि में किए जा सकते हैं।

पूर्णमासी—पूर्णमासी(पूर्णिमा) तिथि में शिल्प, आभूषणों से संबंधित कार्य किए जा सकते हैं। संग्राम, विवाह, यज्ञ, जलाशययात्रा, शांति तथा पोषण करने वाले सभी मंगलकार्य भी किए जा सकते हैं।

अमावस्या—इस तिथि में पितृ कर्म मुख्य रूप से किए जाते हैं। महादान तथा उग्र कर्म किए जा सकते हैं। इस तिथि में शुभ कर्म तथा स्त्री का संग नहीं करना चाहिए।

इस प्रकार ज्योतिष शास्त्र के अनुसार तिथियों का विशेष महत्त्व है। यदि इनका समुचित उपयोग किया जा सके तो जीवन की अनगिनत समस्याओं का समाधान किया जा सकता है और जीवन में शांति पाई जा सकती है। ❑

गुजरात के प्रसिद्ध संत नरसी मेहता जब आठ वर्ष की उम्र तक बोलना नहीं शुरू कर पाए तो उनके परिवार के लोगों को चिंता होने लगी। बच्चे को अनेक वैद्यों को दिखाया गया, लेकिन कोई तरीका प्रभावी न रहा। उनकी दादी उनको नियमित मंदिर ले जातीं और वहाँ उनके बोलने हेतु मनौती मनातीं।

एक दिन मंदिर जाने के मार्ग में उन्हें एक संत दिखाई पड़े, जो बालक नरसी मेहता को देखते ही उनके चरणों में गिर पड़े और बोले—"माँ! यह बालक दिव्य आत्मा है। यह आगे चलकर प्रसिद्ध संत बनेगा और अनेकों को अपने भजनों से प्रेरणा देगा।"

नरसी की दादी आश्चर्य से बोलीं—"पर महाराज! यह तो अभी बोल भी नहीं पाता।" संत बोले—"क्या कभी आपने इससे भगवान का नाम लेने को बोला है?" ऐसा कहते हुए उन्होंने बालक नरसी से कहा—"बेटा! श्रीकृष्ण बोल।" भगवान का नाम लेते ही नरसी मेहता बोलने लगे। महान आत्माएँ प्रभुस्मरण से ही उद्दीप्त होती हैं।

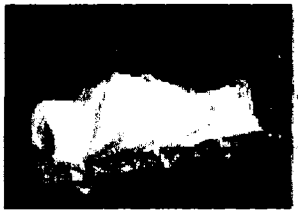

पुनर्जन्म का सिद्धांत

भारतीय संस्कृति में पुनर्जन्म की स्पष्ट अवधारणा है। भारतीय संस्कृति के प्रमुख धर्मग्रंथों में से एक श्रीमद्‌भगवद्‌गीता में पुनर्जन्म की मान्यता व अवधारणा को स्पष्ट करते हुए भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन से कहते हैं—

न त्वेवाहं जातु नासं न त्वं नेमे जनाधिपाः।
न चैव न भविष्यामः सर्वे वयमतः परम्॥

—*गीता 2.12*

अर्थात हे अर्जुन! न तो ऐसा ही है कि मैं किसी काल में नहीं था, तू नहीं था अथवा ये राजा लोग नहीं थे और न ऐसा ही है कि इससे आगे हम सब नहीं रहेंगे।

भगवान श्रीकृष्ण *(गीता 2.13)* में कहते हैं—

देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।
तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति॥

—*गीता 2.13*

अर्थात जैसे जीवात्मा की इस देह में बालकपन, जवानी और वृद्धावस्था होती है, वैसे ही अन्य शरीर की प्राप्ति होती है।

भगवान श्रीकृष्ण पुनः *(गीता 2.22)* में कहते हैं—

वासांसि जीर्णानि यथा विहाय
नवानि गृह्णाति नरोऽपराणि।
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा-
न्यन्यानि संयाति नवानि देही॥

अर्थात जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर दूसरे नए वस्त्रों को ग्रहण करता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीरों को त्यागकर दूसरे नए शरीरों को प्राप्त होती है।

पुनर्जन्म होता क्यों और कैसे है? क्या जीवन-मरण का कोई अंत नहीं? ऐसे सहज प्रश्न हमारे मन में उठ खड़े होते हैं। पुनर्जन्म का अर्थ है पुनः-पुनः जन्म ग्रहण करना। दरअसल पुनर्जन्म की अवधारणा कर्मफल-सिद्धांत तथा आत्मा की अमरता से ही प्रस्फुटित हुई है। जीवात्मा को अपने कर्मों का फल भोगने के लिए मृत्यु के उपरांत पुनः पुनः नए शरीर धारण करना पड़ता है।

जीवात्मा के कर्मों का भोग जब तक पूरा नहीं हो जाता, तब तक उसे नए शरीर धारण करना ही पड़ता है। कर्मों का फल जब एक ही जन्म में भोग पाना संभव नहीं हो पाता या कर्मों का फल-भोग जब एक जन्म में पूरा नहीं हो पाता तो बचे हुए शेष कर्मों का फल भोगने के लिए जीवात्मा को पुनः जन्म लेना ही पड़ता है और इस प्रकार जन्म-मरण का यह क्रम तब तक चलता रहता है, जब तक जीवात्मा को मोक्ष की प्राप्ति नहीं हो जाती।

मोक्ष की प्राप्ति का अर्थ ही है जीवात्मा का सभी प्रकार के कर्म-बंधनों से मुक्त हो जाना। जीवात्मा का शुभ-अशुभ, पाप-पुण्य, अच्छे-बुरे आदि सभी प्रकार के कर्म-संस्कारों के बंधन से मुक्त हो जाना।

पुनर्जन्म का सिद्धांत आत्मा की अमरता से फलित होता है। आत्मा नित्य एवं अविनाशी होने के कारण एक शरीर से दूसरे शरीर में शरीर की मृत्यु के पश्चात प्रवेश करती है या यों कहें कि शरीर की मृत्यु के पश्चात पुनः नूतन शरीर धारण करती है।

मृत्यु का अर्थ शरीर का अंत है, आत्मा का नहीं। इस प्रकार शरीर की मृत्यु के बाद आत्मा का पुनः दूसरा शरीर धारण करना ही पुनर्जन्म है। जीवात्मा के विषय में गोस्वामी तुलसीदास रामचरितमानस में लिखते हैं—

ईश्वर अंस जीव अविनासी।
चेतन अमल सहज सुख रासी॥

अर्थात जीव, ईश्वर का अंश है। अतएव वह अविनाशी, चेतन, अमल और स्वभाव से ही सुख की राशि है।

जीवात्मा निस्संदेह ईश्वर का अंश है। शरीर में वास कर रही आत्मा ईश्वर का ही अंश है, पर सांसारिक विषयों के प्रति आसक्ति की भावना रखने के फलस्वरूप वह बंधनग्रस्त हो जाती है तथा उसे विभिन्न योनियों में, विभिन्न शरीरों में भटकना पड़ता है, पर जैसे ही आत्मा को यह विदित हो जाता है कि मैं ईश्वर का अंश हूँ अर्थात मैं ईश्वर से अभिन्न हूँ, वैसे ही वह अपने वास्तविक सत्-चित्-आनंदस्वरूप को पहचान लेती है और अपने वास्तविक स्वरूप में ही स्थित हो जाती है। यह मोक्ष की अवस्था है। इस अवस्था को प्राप्त कर लेने पर जीवात्मा को पुनः जन्म धारण करना नहीं पड़ता। वह जन्म-मरण के बंधन से मुक्त हो जाती है।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मोक्षप्राप्ति से पूर्व जीवात्मा का पुनर्जन्म होता रहता है। जीवात्मा को अपने अच्छे-बुरे, शुभ-अशुभ, पाप-पुण्य कर्मों के फलस्वरूप पेड़-पौधे, पशु-पक्षी, कीट-पतंग, मनुष्य आदि विभिन्न प्रकार की योनियों में विचरण करना पड़ता है।

अस्तु पुनर्जन्म का सिद्धांत यह स्पष्ट संदेश देता है कि मनुष्य को सदैव बुरे कर्म, पापकर्म से दूर रहना चाहिए और पुण्यकर्म, शुभकर्म भी आसक्तिरहित होकर करना चाहिए अर्थात पुण्यकर्म, शुभकर्म से मिलने वाले मधुर फल अर्थात सुख के प्रति भी आसक्ति नहीं रखनी चाहिए; क्योंकि आसक्ति शुभ के प्रति हो या अशुभ के प्रति, पाप के प्रति हो या पुण्य के प्रति, दोनों ही स्थिति में आसक्ति जीवात्मा के लिए बंधन ही है और उसके पुनर्जन्म का हेतु है। इसलिए इस बंधन से मुक्त होने के लिए हमें सदा आसक्तिरहित होकर ही हर कर्म करना चाहिए। ❑

पता-फोन परिवर्तन सूचना

अखण्ड ज्योति संस्थान का स्थान परिवर्तित हो गया है, नया पता अब इस प्रकार है—

अखण्ड ज्योति संस्थान

बिरला मंदिर के सामने, मथुरा-वृंदावन रोड, जयसिंहपुरा, मथुरा (281003)

बदले हुए नए फोन नंबर

दूरभाष नंबर : (0565) 2403940, 2412272, 2412273, 2972449

मोबाइल नंबर : 9927086291, 7534812036, 7534812037, 7534812038, 7534812039

कृपया इन मोबाइल नंबरों पर एस.एम.एस. न करें

नया ई-मेल-akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

अखण्ड ज्योति पत्रिका हेतु बैंक खातों का विवरण

जमा रसीद की प्रति एवं विवरण ई-मेल, पत्र द्वारा भेजें; अन्यथा राशि का समायोजन नहीं हो पाएगा।

Beneficiary –	Akhand Jyoti Sansthan	I.F.S. Code	Account No.
S.B.I.	Ghiya Mandi Mathura	SBIN0031010	51034880021
P.N.B.	Chowki Bagh Bahadur, Mathura	PUNB-0183800	1838002102224070
I.O.B.	Yug Nirman Tapobhoomi, Mathura	IOBA0001441	144102000000006

विदेशी धन बैंक में सीधे जमा न करें, ड्राफ्ट द्वारा भेजें।

ब्रह्मवर्चस-देव संस्कृति शोध सार—177

गठिया रोग का उपचार

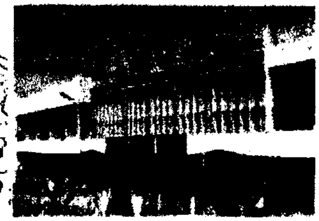

बढ़ती उम्र के साथ आर्थराइटिस की समस्या होना एक आम बात है। इसे गठिया रोग या जोड़ों में दरद की बीमारी भी कहा जाता है। इसके सामान्य लक्षणों में हाथ, कंधों, पीठ का निचला हिस्सा, कमर, घुटने और कूल्हे के जोड़ों में दरद और सूजन का आ जाना है।

इस रोग के उत्पन्न होने का मुख्य कारण है— हड्डियों को आपस में जोड़ने वाले ऊतकों (कार्टिलेज) का धीरे-धीरे उम्र के साथ नष्ट होते जाना। वैसे तो यह बुढ़ापा का रोग माना जाता है, परंतु वर्तमान की स्थिति में गलत खान-पान की आदतें और विकृत जीवनशैली के कारण कम उम्र में ही लोग इसके शिकार होते जा रहे हैं।

आयुर्वेद के सिद्धांतों में इसे वातव्याधि माना गया है। आचार्य चरक के संहिता ग्रंथ में संधिगत वात अर्थात ऑस्टियो आर्थराइटिस का सर्वप्रथम उल्लेख मिलता है। जोड़ों में सूजन तथा चलने-फिरने में दरद एवं परेशानी को इस रोग का प्रमुख लक्षण बताया गया है।

समय पर इसका उपचार एवं प्रबंधन न किया जाए तो यह धीरे-धीरे असह्य पीड़ा का कारण बन जाता है। यह ऐसा रोग है, जिसकी समय पर रोक-थाम व उपचार की प्रक्रिया न अपनाई जाए तो व्यक्ति का जीवन अपनी गुणवत्ता से हीन होकर पीड़ा और विकलांगता का पर्याय बन जाता है।

संधिगत वात के प्रबंधन एवं उपचार के लिए एलोपैथ, आयुर्वेद, एक्यूप्रेशर व अन्य योग आदि वैकल्पिक चिकित्सा विधाओं की सहायता ली जाती है। आहार संतुलन, जीवनशैली में परिवर्तन तथा योगाभ्यास व व्यायाम को इसके उपचार में सबसे ज्यादा प्रभावी माना गया है।

इसके साथ ही प्राचीन भारतीय चिकित्सा परंपराओं में भी वातव्याधियों के समुचित प्रबंधन की अनेक तकनीकें मौजूद हैं, लेकिन उन्हें आधुनिक युग की माँग के अनुरूप वैज्ञानिकता के साथ सामने लाने की आवश्यकता है। इस दिशा में पहल करते हुए देव संस्कृति विश्वविद्यालय में प्राच्य अध्ययन विभाग के अंतर्गत एक विशिष्ट शोध अध्ययन कार्य संपन्न किया गया है।

यह शोध अध्ययन वर्ष—2020 में 'आयुर्वेद' विषय के अंतर्गत शोधार्थी अल्का मिश्रा द्वारा विश्वविद्यालय के श्रद्धेय कुलाधिपति डॉ० प्रणव पण्ड्या जी के विशेष संरक्षण एवं डॉ० वंदना श्रीवास्तव जी के निर्देशन में पूरा किया गया है। प्रायोगिक एवं विवेचनात्मक विधि पर आधृत इस शोध अध्ययन का विषय है—'**इवॉल्यूशन ऑफ इफिकैसी ऑफ मर्मथैरेपी विद् जानु वस्ति इन दि मैनेजमेन्ट ऑफ जानु संधिगत वात (ऑस्टियो आर्थराइटिस ऑफ नी)।**'

इस महत्त्वपूर्ण प्रायोगिक शोध अध्ययन को शोधार्थी द्वारा कुल छह अध्यायों में विभाजित कर प्रस्तुत किया गया है। प्रथम अध्याय 'विषय परिचय' के रूप में है।

इसके अंतर्गत इस शोध अध्ययन की आवश्यकता, उद्देश्य एवं इसके विषय-क्षेत्र से संबंधित शोधकार्यों व ग्रंथों-पुस्तकों, शोधपत्रों का

सर्वेक्षणात्मक अध्ययन प्रस्तुत किया गया है। साथ ही चरों का विवेचन व परिकल्पनाओं को भी इसी अध्याय में समाहित किया गया है।

आयुर्वेद का ज्ञान प्राचीन भारतीय ऋषियों द्वारा प्रदान किया गया अमूल्य उपहार और अनुदान है। यह मनुष्य जीवन का विज्ञान है, जो संपूर्ण व्यक्तित्व को आरोग्यवान, स्वस्थ एवं सुविकसित बनाने में समर्थ है।

भारतीय चिकित्सा पद्धतियों में आयुर्वेद का स्थान आदिकाल से सर्वोपरि और प्रासंगिक रहा है। यह शारीरिक, मानसिक, भावनात्मक व अन्य सभी प्रकार के मनोशारीरिक स्तर को प्रभावित करने वाले तनावों तथा अन्य कारणों को दूर कर हमारी रोग प्रतिरोधक, ऊर्जा और प्राणशक्ति में वृद्धि करता है।

आयुर्वेद का सिद्धांत यह है कि समूचे विश्व-ब्रह्मांड की रचना पंचमहाभूतों से हुई है और वहीं पंचमहाभूत से हमारा शरीर और जीवन भी बना है। अत: प्रकृति और उसके उपादानों को आधार बनाकर ही यह रोगोपचार और स्वास्थ्य प्रबंधन की ओर अग्रसर होता है।

आयुर्वेद का ही एक विशिष्ट चिकित्सकीय पक्ष है—मर्म चिकित्सा, जिसे ऋषियों ने शरीरस्थ प्राण-ऊर्जा के मर्मस्थलों को आधार बनाकर विकसित किया है। वेद, उपनिषद्, पुराण आदि शास्त्रों में भी मर्मस्थलों का उल्लेख है, परंतु आयुर्वेद विज्ञान में इसे एक उपयुक्त और प्रभावी व समग्र चिकित्सा तकनीक के स्वरूप में स्थान दिया गया है।

वर्तमान समय में आयुर्वेद का प्रचलन तो बहुतायत दिखाई देता है, परंतु मर्म विज्ञान एवं मर्म चिकित्सा के क्षेत्र में समाज अभी ज्यादा जागरूक नहीं है। अत: इस दिशा में यह शोध अध्ययन पर्याप्त जानकारी और मार्गदर्शन प्रदान करने वाला महत्त्वपूर्ण सोपान साबित होगा।

अध्ययन के द्वितीय अध्याय में मर्म विज्ञान एवं उसके चिकित्सकीय प्रयोग के मूलभूत पहलुओं की विवेचना की गई है। इसके अंतर्गत मर्म विज्ञान का ऐतिहासिक, साहित्यिक स्वरूप तथा यौगिक तकनीकों के साथ इसके अंतर्संबंधों को प्रस्तुत किया गया है।

मर्मविज्ञान का एक स्वतंत्र चिकित्सा विधि के रूप में क्या स्वरूप है तथा यह विभिन्न रोगों के उपचार में किस प्रकार प्रयुक्त की जाती है, इसके प्रयोग की तकनीक क्या है, इन महत्त्वपूर्ण पहलुओं की विस्तृत विवेचना इस अध्याय की अंतर्वस्तु है।

तृतीय अध्याय में शोधार्थी द्वारा शोध विषय से संबंधित व्यवहार्यता अध्ययन (पायलट स्टडी) की विवेचना की गई है। इस अध्ययन में जानु संधिगत वात के प्रबंधन में जानु वस्ति के प्रभाव एवं महत्त्व को प्रायोगिक रूप में प्रस्तुत किया गया है। प्रयोग के लिए शोधार्थी द्वारा देव संस्कृति विश्वविद्यालय के आयुर्वेद एवं समग्र स्वास्थ्य विभाग के अंतर्गत जानु संधिगत वात के छह मरीजों को चयनित किया गया।

इन सभी की उम्र 40 से 70 वर्ष के मध्य थी। प्रयोग से पूर्व सभी को इस उपचार-प्रक्रिया से संबंधित आवश्यक जानकारी प्रदान की गई तथा सहभागिता के लिए उनसे लिखित स्वीकृति प्राप्त की गई।

सर्वप्रथम चयनितों की हिमेटोलॉजिकल, बायलॉजिकल जाँच एवं घुटने के संधिस्थान का एक्स-रे परीक्षण कर महत्त्वपूर्ण तथ्यों को प्राप्त किया गया। तत्पश्चात 21 दिनों तक नियमित 50 से 60 मिनिट की अवधि में जानु वस्ति तकनीक से उपचार प्रदान किया गया।

प्रयोग पूर्ण होने पर पुनः पूर्व की भाँति स्वास्थ्य परीक्षण किया गया और दोनों परीक्षणों से प्राप्त आँकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण किया गया। इस अध्ययन के परिणामों में शोधार्थी ने यह पाया कि जानु संधिगत वात (ऑस्टियो आर्थराइटिस) पर जानु वस्ति उपचार का सकारात्मक एवं सार्थक प्रभाव पड़ता है।

इस प्रारंभिक अध्ययन से प्राप्त निष्कर्ष को आधार बनाकर शोधार्थी द्वारा जानु वस्ति के द्वारा गठिया के उपचार को अपनी मुख्य शोध-समस्या के समाधान हेतु सहायक तकनीक के रूप में प्रयुक्त किया गया है।

शोध अध्ययन का चतुर्थ अध्याय सबसे महत्त्वपूर्ण है। इसमें शोध विषय पर केंद्रित प्रयोग की शोध विधि एवं प्रामाणिक तथ्यों का विवेचन किया गया है। प्रयोग को पूरा करने के लिए शोधार्थी द्वारा विश्वविद्यालय के समग्र स्वास्थ्य प्रबंधन एवं आयुर्वेद केंद्र में उपचार के लिए आए लोगों में से ऑस्टियो आर्थराइटिस (घुटने के जोड़ों में पुराना दरद जिसका विवरण आयुर्वेद में जानु संधिगत वात के रूप में किया गया है) के बीस लोगों को चयनित किया गया।

इनमें महिला, पुरुष दोनों सम्मिलित थे और इनकी आयु 40 से 70 वर्ष के मध्य थी। प्रयोग प्रारंभ करने से पूर्व सभी चयनितों का शोध-उपकरणों की सहायता से स्वास्थ्य परीक्षण एवं एक्स-रे किया गया।

परीक्षण के पश्चात नौ दिनों तक नियमित लगभग एक-से-सवा घंटे तक शोधार्थी द्वारा सभी प्रतिभागियों का जानु वस्ति (क्षीरबला तेल द्वारा), दशमूल क्वाथ से नाड़ी स्वेद तथा मर्म चिकित्सा (जानु मर्म, इंद्रवस्ति मर्म, गुल्फ मर्म एवं क्षिप्रा मर्म) प्रदान की गई।

प्रयोग की अवधि पूर्ण होने पर दूसरे एवं चतुर्थ सप्ताह में उपचार के प्रभाव एवं रोग की स्थिति का परीक्षण किया गया। प्रारंभिक एवं प्रयोग समाप्ति के उपरांत एकत्रित किए गए शोध के आँकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण करने पर शोधार्थी द्वारा शोध परिणाम के रूप में यह पाया गया कि मर्म चिकित्सा तथा जानु वस्ति का जानु संधिगत वात के प्रबंधन एवं उपचार में सार्थक एवं सकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

शोध के पंचम अध्याय 'परिणाम एवं विवेचन' में शोधार्थी द्वारा प्रयोग से प्राप्त आँकड़ों के विश्लेषण द्वारा प्राप्त परिणामों की विस्तृत विवेचना करते हुए शोध उद्देश्य एवं परिकल्पनाओं की सार्थकता को प्रस्तुत किया गया है।

इसके साथ ही शोध अध्ययन की महत्त्वपूर्ण एवं उपादेयी उपलब्धि को निष्कर्ष रूप में प्रस्तुत करते हुए इस अध्ययन में प्रयुक्त चिकित्सा तकनीकों के महत्त्व एवं प्रभाव को सामने लाने का प्रयास किया गया है।

इस शोध अध्ययन का सबसे महत्त्वपूर्ण पक्ष ऐसी चिकित्सा तकनीकों को उजागर करना है, जिनका प्राचीन वैदिक चिकित्सा प्रणालियों में विशिष्ट स्थान है। आयुर्वेद हमारी प्राचीनतम संस्कृति का उन्नत स्वास्थ्य विज्ञान है। संपूर्ण स्वास्थ्य के संरक्षण, विकास एवं उपचार में आयुर्वेद की महत्ता अद्यतन यथावत् है।

इसी महत्ता के फलस्वरूप इस शोध में आयुर्वेद की विशिष्ट तकनीकों का प्रयोग हेतु चयन किया गया है, ताकि आधुनिक विज्ञान के मानदंडों के समक्ष वैज्ञानिक कसौटियों के माध्यम से भी इन ऋषिप्रणीत तकनीकों के महत्त्व को जनसामान्य के सामने लाया जा सके एवं इनके लाभों से सभी को परिचित कराया जा सके।

यही इस शोध अध्ययन का मूल उद्देश्य भी है। उल्लेखनीय है कि इस अध्ययन के सार्थक एवं सकारात्मक परिणामों के पीछे का मुख्य कारण प्रयोग हेतु चयनित मर्म चिकित्सा और जानु वस्ति की विशिष्ट तकनीकें हैं।

मर्म चिकित्सा एक पुरातन चिकित्सा विज्ञान है, ज़िसमें व्यक्ति स्वयं रोगों का उपचार, प्रबंधन एवं रोक-थाम करता है। यह ऐसी स्व-चिकित्सा विधि है, जो शरीर में स्थित 107 मर्म स्थानों (प्राण-शक्ति के केंद्र) के माध्यम से संपूर्ण स्वास्थ्य पर कारगर रूप से प्रभावी लाभ पहुँचाती है।

मर्म चिकित्सा को भारत की प्राचीनतम चिकित्सा प्रणालियों में से एक माना गया है। वेद, उपनिषद्, पुराण आदि में मर्म चिकित्सा के उल्लेख को शोध में प्रस्तुत किया गया है। चरक, सुश्रुत आदि संहिताओं में इस विधि की विस्तृत विवेचना प्राप्त होती है।

मनुष्य के शरीर-क्रिया विज्ञान के आधार पर कैसे मर्म चिकित्सा विज्ञान को विकसित एवं समग्र उपचार-विधि के रूप में प्रयुक्त किया जाता है, इस तथ्य का विस्तृत एवं स्पष्ट विवेचन इस शोध में समाहित है।

यह संधिगत वात रोगों पर तो सार्थक प्रभाव डालती है, साथ ही संपूर्ण स्वास्थ्य को भी सकारात्मक रूप से प्रभावित कर आरोग्यता प्रदान करती है। इतनी सरल एवं सहज है कि कोई भी व्यक्ति कुछ दिनों में किसी योग्य प्रशिक्षक से रोगानुसार अपने शरीर के मर्म स्थानों एवं उन पर दबाव की प्रक्रिया को सीखकर घर बैठे ही स्वयं से अपनी बड़ी-से-बड़ी बीमारी ठीक कर सकता है। इसके कोई दुष्प्रभाव भी नहीं हैं। इस शोध अध्ययन में पर्याप्त मार्गदर्शन एवं प्रेरणा प्रदान करने वाला सार्थक एवं सराहनीय कार्य है। ❑

भगवान बोधिसत्त्व अपने पूर्वजन्म में हाथी की योनि में थे। एक बार उनके जंगल में भीषण आग लग गई तो जंगल के सभी प्राणी अपनी जान बचाने के लिए भागे।

उसी क्रम में हाथीरूपी भगवान बोधिसत्त्व ने अपना पैर उठाया तो एक छोटा-सा खरगोश उनके पैर के नीचे आश्रय पाने को खड़ा हो गया। बोधिसत्त्व धर्मसंकट में पड़ गए।

यदि वे पैर नीचे रखते तो खरगोश उनके पैर के नीचे दबकर मृत्यु को प्राप्त होता अन्यथा वे स्वयं जलती आग की गरमी से मृत्यु को प्राप्त होते, परंतु बोधिसत्त्व ने करुणा का अप्रतिम उदाहरण देते हुए स्वयं को जलती आग में उत्सर्ग कर दिया और उस खरगोश की जान बचा ली। उनके शरीर छोड़ने पर देवराज इंद्र ने उनसे पूछा— "भगवन्! आपने ऐसा क्यों किया?"

बोधिसत्त्व ने उत्तर दिया—"देवराज! प्राणिमात्र के पास दूसरे प्राणी को नुकसान पहुँचाने के अनेक अवसर आते हैं, पर उस पर करुणा करने के अवसर सीमित ही होते हैं। मैंने तो बस, प्राप्त अवसर को सौभाग्य में बदल लिया।"

कैसे चुनें सही कैरियर?

किसी भी व्यक्ति के जीवन में दो घटनाएँ अत्यधिक महत्त्व रखती हैं—पहली वह किस परिवार में जन्म लेता है और दूसरी वह किस कैरियर में प्रवेश करता है। पहली घटना पर उसका कोई नियंत्रण नहीं होता, परंतु दूसरी को वह काफी हद तक प्रभावित कर सकता है।

जन्म का व्यक्ति की सफलता और ख्याति से कोई सीधा संबंध नहीं है। सफल और संपन्न परिवार में जन्मे बच्चों को अन्य की तुलना में अनेक लाभ होते हैं। अब दूसरी घटना को लिया जाए। कैरियर यानी जीविकार्जन के लिए हम किस व्यवसाय को अपनाएँगे, यह हमारे जीवन का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण विषय है, जो बहुत सीमा तक हमारे हाथ में होता है। प्रत्येक व्यक्ति को यह अहम फैसला स्वयं ही करना होता है। हालाँकि वह इसमें अनेक लोगों से सलाह ले सकता है।

कैरियर का चुनाव यदि इतना महत्त्वपूर्ण है तो कैसे इसको चुना जाए, जिससे कि व्यक्ति को अधिकतम लाभ मिल सके। इस संबंध में काउंसलिंग से बहुत फायदा होता है, परंतु कठिनाई यह है कि इसके लिए सही व्यक्ति मिलना एक समस्या है। इसकी कमी को देखते हुए इस समय कैरियर काउंसलिंग करने वालों की बाढ़-सी आई हुई है, लेकिन इसमें अधिकतर अनुभवी कम हैं। वास्तव में ये सब सूचना केंद्र हैं, सलाहकार नहीं। ये केंद्र यह तो बता सकते हैं कि क्या-क्या कैरियर उपलब्ध हैं, परंतु हमको किस कैरियर में जाना चाहिए या कौन-सा कैरियर हमको सबसे अधिक सफलता प्रदान कर सकता है, यह बताना उनके लिए कठिन है।

तो कौन कर सकता है हमारी समस्या का समाधान? कैरियर गाइड सबसे पहले तो हमारे माता-पिता हैं, जो हमको बचपन से देखते-समझते आ रहे हैं। उनको पता होता है हमारी कमजोरियाँ क्या हैं और हम किन कामों को ज्यादा अच्छी तरह कर सकते हैं। सामान्यत: पिता यह चाहते हैं कि हम उनके व्यवसाय को अपनाएँ।

इस बात से उन्हें गर्व महसूस होता है कि उनका पुत्र या पुत्री उनके ही नक्शेकदम पर चल रहा है। इसमें कोई हर्ज भी नहीं है, क्योंकि वातावरण का लाभ तो मिलता ही है। वातावरण से हम वह सब सीख सकते हैं, जो कोई स्कूल नहीं सिखा सकता।

यदि हमारी रुचि पिता के व्यवसाय में है, तो उसे अपनाने में ज्यादा सोचना नहीं चाहिए, लेकिन अक्सर ऐसा होता है कि उस व्यवसाय के लिए हमारे अंदर वह योग्यता या इच्छा नहीं होती, जो हमारे माता-पिता में होती है।

अक्सर यह भी होता है कि घर में पिता या माँ को अपने कैरियर के बारे में इतनी घृणा हो जाती है कि वे हमेशा कहते हैं कि बेटे या बेटी को इसमें नहीं जाने देंगे।

अक्सर फौज या पुलिस में काम करने वाले ऐसा कहते हैं। इससे बच्चों के मन में उस कैरियर के बारे में अरुचि उत्पन्न हो जाती है। वास्तव में दोनों ही स्थितियाँ उचित नहीं हैं।

माता-पिता को घर में किसी भी कैरियर के बारे में कोई अंतिम राय नहीं बनानी चाहिए। घर में ऐसा माहौल होना चाहिए कि विभिन्न कैरियर

के बारे में समाधानपरक बातचीत हो। सबकी अच्छाइयाँ और बुराइयाँ खोजी जानी चाहिए। बच्चों को उनके लाभ और हानियाँ पता होने चाहिए।

यदि ऐसा वातावरण बनाया जाए, तो बच्चों को एक तार्किक निर्णय लेने में सहायता मिलती है। दूसरे सहायता केंद्र परिवार के मित्रगण होते हैं। वास्तव में प्रत्येक परिवार को एक विस्तृत घेरा बनाना चाहिए, जिसमें विभिन्न व्यवसायों के व्यक्ति हों।

इससे बच्चों को हर कैरियर की जानकारी मिलती है, उनके कार्यकलापों के बारे में पता चलता है, उनके अच्छे-बुरे पहलुओं को देखने का मौका मिलता है और एक विस्तृत सूचना आधार बन जाता है।

यदि ऐसा नहीं होता तो बच्चे भटकते रहते हैं, क्योंकि उन्हें केवल एक ही प्रकार के कैरियर और जीवन की जानकारी मिलती है। तीसरा सहायता केंद्र स्कूल व कॉलेज होता है, जहाँ जीवन के प्रारंभ के 15 से 20 वर्ष गुजरते हैं।

यहाँ वे शिक्षकों के प्रभाव में आते हैं, जो उनके व्यक्तित्व को गढ़ते हैं। इसके अतिरिक्त वे बच्चों की योग्यता को वास्तव में पहचानते हैं। शिक्षकों से अधिक बच्चों का मित्र समुदाय महत्त्वपूर्ण होता है। प्रयत्न यह होना चाहिए कि इस ग्रुप में विभिन्न व्यवसायों के परिवारों के बच्चे हों। इससे बच्चों को कई तरह के वातावरण के बारे में जानकारी मिलती है।

चौथा सहायता केंद्र होता है पत्रिकाएँ, अखबार व पुस्तकें। इनमें विभिन्न प्रकार के समाचार व लेख पढ़ने को मिलते हैं। इसके अतिरिक्त विभिन्न व्यवसाय से संबंधित शिक्षा-केंद्रों के विज्ञापन निकलते रहते हैं। उनसे पता चलता रहता है कि कहाँ-कहाँ पर किस प्रकार के शिक्षा के केंद्र हैं।

सामान्यत: दसवीं कक्षा में आने पर ही माता-पिता कैरियर के बारे में सोचना प्रारंभ करते हैं। तब तमाम सूचनाएँ एकत्र की जाती हैं, मित्रों से बातचीत की जाती है और इधर-उधर भाग-दौड़कर महीनों में ही तय किया जाता है कि कौन-सा कैरियर अपनाया जाए, लेकिन यह गलत है।

वास्तव में कैरियर के बारे में तो काफी जल्दी सोचना प्रारंभ कर देना चाहिए। बारह वर्ष की आयु तक माता-पिता को काफी कुछ सोच लेना चाहिए कि कौन-कौन से कैरियर बच्चे के लिए उपयुक्त हो सकते हैं। केवल एक कैरियर के बारे में ही नहीं सोचना चाहिए। यह अत्यधिक प्रतियोगिता का युग है, इसलिए वैकल्पिक कैरियर संभावना के बारे में पहले से ही सोचकर तैयार रहना चाहिए।

होता यह है कि यदि बच्चे को किसी अच्छी संस्था में प्रवेश नहीं मिल पाता, तो उसको किसी साधारण संस्था में भेज दिया जाता है। दो-तीन साल प्रशिक्षण लेने के बाद भी उसको अच्छी नौकरी नहीं मिल पाती। अगर वे ऐसे कार्यक्रम में प्रवेश की अपेक्षा अपनी रुचि के किसी दूसरे कोर्स को चुनते, तो वे सफल होते।

किसी भी कैरियर का चुनाव करते समय यह ध्येय होना चाहिए कि उसमें नंबर एक की स्थिति प्राप्त की जाए। इसके लिए चार बातों पर ध्यान देना होता है—रुचि, योग्यता, प्रशिक्षण और व्यक्तिगत विशेषताएँ।

इनमें रुचि बहुत ही महत्त्वपूर्ण तत्त्व है, जो किसी भी कैरियर में सफल होने के लिए आवश्यक है। हम किसी भी व्यवसाय को चुनें, सफलता तब तक हमारे कदम नहीं चूमेगी, जब तक हम प्रवीणता हासिल नहीं कर लेते।

इसके लिए आवश्यक है कि हम अपने व्यवसाय की बारीकियों को समझें, उसमें हो रहे आधुनिक विकास के बारे में जानकारी रखें और अपना कार्य इस प्रकार करें कि प्रत्येक उससे खुश हों। यह तभी संभव है, जब हमें अपने काम में रुचि होगी। रुचियाँ व्यक्तिगत होती हैं।

यदि हम और हमारे निकटतम संबंधी हमारी रुचियों को ठीक प्रकार से समझ पाएँ, तो न केवल हम एक ठीक कैरियर का चुनाव कर पाएँगे, बल्कि उसमें अधिकतम सफलता भी प्राप्त कर सकेंगे।

योग्यता आज के युग में सबसे महत्त्वपूर्ण तथ्य है। कम ही बच्चों में जन्मजात योग्यता पाई जाती है। अधिकतर लोगों को यह स्वयं ही विकसित करनी पड़ती है। इसलिए जिस कैरियर में जाना हो, उससे संबंधित योग्यताएँ प्रारंभ से ही विकसित करनी चाहिए, जो बच्चे आईआईटी की तैयारी दसवीं से ही प्रारंभ करते हैं, वे आसानी से सफलता प्राप्त कर लेते हैं।

भाषा का अच्छा ज्ञान, स्वयं को अभिव्यक्त करने की क्षमता, तर्कपूर्ण तरीके से सोचना, सिद्धांतों को व्यवहार में प्रयोग करना, कई तथ्यों को साथ रखकर सोचना और समाधान निकालना इस प्रकार की अनेक योग्यताएँ हैं, जो बचपन से ही विकसित की जा सकती हैं। प्रशिक्षण—योग्यता के बाद सबसे महत्त्वपूर्ण बात है प्रशिक्षण की। प्रशिक्षण हमारी योग्यता को निखार देता है।

यह बात दूसरी है कि स्वयं के व्यापार में बिना प्रशिक्षण प्रवेश पाया जा सकता है, परंतु यहाँ भी पिता या रिश्तेदार के साथ काम करते हुए स्वतः ही प्रशिक्षण हो जाता है, लेकिन अगर व्यवसाय का प्रशिक्षण किसी उच्चकोटि के संस्थान से लिया जाए, तो बेहतर होता है।

व्यक्तिगत विशेषताएँ प्रत्येक व्यक्ति की अपनी विशेषताएँ होती हैं। कुछ लोग किसी बात को जल्दी समझ जाते हैं, तो कुछ लोगों को बार-बार समझाने पर भी समझ नहीं आता। कुछ लोग अपनी बात अच्छी तरह कह पाते हैं, बातों की तह तक पहुँच जाते हैं और कुछ लोग बोल ही नहीं पाते।

इस प्रकार के व्यक्तिगत अंतर सामान्यतः देखने को मिल जाते हैं। कैरियर की सफलता के लिए जरूरी है कि हमारी व्यक्तिगत विशेषताओं का कैरियर के साथ उचित तालमेल हो। जरूरी है आत्मचिंतन। यह अच्छी तरह समझ लेना चाहिए कि कैरियर काउंसलिंग एक डॉक्टर के पास जाने जैसा नहीं है कि बीमारी हुई और पता चल गया कि क्या दवाई लेनी है।

कैरियर का चयन करना है तो आत्मचिंतन करना या अपने आप को जानना ही होगा। कैंरियर से संबंधित विभिन्न पहलुओं के बारे में जितना पता किया जाए और जितनी जानकारी ली जाए, अच्छा है, परंतु फैसला तो हमको ही करना होगा; क्योंकि कैरियर चुनने के सही और गलत परिणाम तो हमको ही भुगतने पड़ेंगे, किसी और को नहीं। कैरियर चयन के संबंध में अपनी रुचि, क्षमता को विशेष ध्यान रखना चाहिए। इसके बाद कुशलता एवं कड़ी मेहनत की आवश्यकता होती है। यदि इन मानदंडों में हम खरे उतर रहे हैं तो ही उनका चयन करना चाहिए। ❑

सृजन शिल्पियों के समुदाय को अग्रगामी बनाने में लगी हुई केंद्रीय शक्ति अपने और दूसरों के अनेकानेक उदाहरण प्रस्तुत करते हुए यह विश्वास दिलाती है कि यह पारस से सटने का समय है, कल्पवृक्ष की छाया में बैठने का अवसर है। प्रभाव पर्व में जागरूकता का परिचय देकर हममें से हर किसी को प्रसन्नता, प्रफुल्लता और सफलता की उपलब्धियों का भरपूर लाभ मिल सकता है, साथ ही परिष्कृत-प्रतिभायुक्त व्यक्तित्व सँजोने का भी। —*परमपूज्य गुरुदेव*

मोक्षप्राप्ति का मार्ग

(श्रीमद्भगवद्गीता के श्रद्धात्रयविभागयोग नामक सत्रहवें अध्याय की तेईसवीं किस्त)

[श्रीमद्भगवद्गीता के सत्रहवें अध्याय के तेईसवें एवं चौबीसवें श्लोक पर चर्चा इससे पूर्व की किस्त में की गई थी। इस श्लोक में श्रीभगवान कहते हैं कि ॐ, तत्, सत् इन तीन प्रकार के नामों से जिस परमात्मा का संकेत किया गया है, उसी परमात्मा से सृष्टि के आदि में वेदों तथा ब्राह्मणों की रचना हुई है और इसीलिए वैदिक सिद्धांतों को मानने वाले पुरुषों की शास्त्र-विधि से नियत यज्ञ, दान और तप रूप क्रियाएँ 'ॐ'—इस परमात्मा के नाम का उच्चारण करके ही आरंभ होती हैं। इस श्लोक में भगवान कृष्ण कह रहे हैं कि वह शुद्ध, चैतन्य, निर्विकार, शाश्वत, चैतन्य सत्ता—जिसे हम परमात्मा के नाम से जानते एवं पुकारते हैं, वे परमात्मा ॐ, तत् एवं सत्—इन तीन नामों से जाने जाते हैं। जप, होम, संस्कार आदि संपूर्ण क्रियाओं की सफलता का आधार ये ही तीन नाम हैं—इसमें कोई संदेह नहीं है। वे कहते हैं कि यह भी कारण है कि वेदों को और वैदिक सिद्धांतों को मानने वालों के लिए ॐ का उच्चारण करके कार्य को करना मुख्य हो जाता है। ऐसा करने के पीछे कारण शब्द नहीं, वरन भाव की प्रधानता है।]

इसके बाद भगवान कृष्ण कहते हैं कि

तदित्यनभिसन्धाय, फलं यज्ञतपःक्रियाः।
दानक्रियाश्च विविधाः क्रियन्ते
मोक्षकाङ्क्षिभिः॥ *25*॥

शब्दविग्रह—तत्, इति, अनभिसन्धाय, फलम्, यज्ञतपःक्रियाः, दानक्रियाः, च, विविधाः, क्रियन्ते, मोक्षकाङ्क्षिभिः।

शब्दार्थ—तत् अर्थात 'तत्' नाम से कहे जाने वाले परमात्मा का ही यह सब है (**तत्**), इस (भाव से) (**इति**), फल को (**फलम्**), न चाहकर (**अनभिसन्धाय**), नाना प्रकार की (**विविधाः**), यज्ञ, तपरूप क्रियाएँ (**यज्ञतपःक्रियाः**), तथा (**च**), दान रूप क्रियाएँ (**दानक्रियाः**), कल्याण की इच्छा वाले पुरुषों द्वारा (**मोक्षकाङ्क्षिभिः**), की जाती हैं (**क्रियन्ते**)।

अर्थात तत् नाम से कहे जाने वाले परमात्मा के लिए ही सब कुछ है—ऐसा मानकर मुक्ति चाहने वाले मनुष्यों द्वारा फल की इच्छा से रहित होकर अनेकों प्रकार की यज्ञ और तपरूप क्रियाएँ तथा दानरूप क्रियाएँ की जाती हैं। ऐसा कहने के पीछे के कारण दो हैं। पहला, यह संसार नित-निरंतर परिवर्तनशील है एवं नाशवान है। इस नष्ट होने वाले संसार में अविनाशी सत्ता तो मात्र शुद्ध, चैतन्य, निर्विकार ईश्वर की है, वो परमात्मा ही एकमात्र अजर, अमर, अविनाशी हैं तो हमारी क्रियाओं का केंद्र भी ऐसी ही शक्ति व चेतना हो सकती है एवं होनी चाहिए।

दूसरा कारण, ऐसा कहने के पीछे यह है कि समस्त कर्मों को ईश्वर को अर्पण कर देने से ही निरहंकारिता व निष्कामता विकसित हो पाती हैं। इस नाशवान संसार को अनित्य मानना ही अविद्या

►'नारी सशक्तीकरण' वर्ष ◄

का मूल हेतु है एवं इस संसार में आसक्त हो जाने के कारण ही हम उस सर्वशक्तिमान परमात्मा का अनुभव नहीं कर पाते, जो कण-कण में व्याप्त है। इसीलिए भगवान कृष्ण, अर्जुन को यह सूत्र बताते हैं कि इस संसार में परमात्मा को अंत:करण में धारण करके समस्त कर्मों को निष्काम भाव से उन्हें अर्पण कर देने से सत्य का साक्षात्कार हो पाता है।

यह सूत्र भगवान ने साधकों को इंगित करके कहा है। इस सूत्र में तीन प्रमुख बातें हैं—'ॐ' अर्थात परमात्मा, 'तत्' अर्थात परमात्मा को निष्काम भाव से, फल की आशा को त्यागकर एवं 'सत्' अर्थात कर्म किए जाएँ।

इस तरह ये तीनों शब्द परस्पर गुँथे हुए हैं और साथ-साथ मिलकर यह संदेश देते हैं कि संसाररूपी दु:खों के मूल से सदा-सर्वदा के लिए मुक्त होने का आधार ये ही तीन सूत्र हैं। श्रीभगवान इस सूत्र में कहते हैं कि '**मोक्षकांक्षिभि:**' अर्थात ऐसा उनको करना चाहिए, जो मोक्ष की इच्छा रखते हों। जो संसार की, सांसारिक वस्तुओं की प्राप्ति की आकांक्षा रखें, उनके लिए यह पथ नहीं है।

'तत्' का अर्थ ही 'मैं' भाव को त्याग देने से है, तत् का अर्थ ही उस परमात्मा के प्रति अपना सर्वस्व अर्पित कर देने से है तो ऐसा वह ही कर सकता है, जिसने मोक्ष की कामना धारण कर ली हो। ऐसे लोगों के लिए क्रियाओं को करने का आध्यात्मिक आधार निष्कामता हो जाता है।

इसीलिए भगवान इस श्लोक में कहते हैं कि '**फलम् अनभिसंधाय**' अर्थात 'फल की आसक्ति न रखते हुए' ये सारी क्रियाएँ संपन्न की जाएँ। जो ऐसा कर पाने में सफल हो पाते हैं—वे ही ईश्वरप्राप्ति के अधिकारी बन पाते हैं। भगवान कृष्ण के द्वारा अर्जुन को दिया गया यह संकेत, हर उस साधक के लिए दिशा-निर्देश है, जो मोक्षप्राप्ति के मार्ग का पथिक है। (क्रमश:)

स्वामी रामकृष्ण परमहंस से उनके एक शिष्य ने पूछा कि काम, क्रोध पर विजय कैसे पाई जा सकती है?

स्वामी रामकृष्ण परमहंस ने उत्तर दिया—"ये काम, क्रोध, लोभ आदि एकदम से नहीं जाते। इसलिए पहले उनका मुँह ईश्वर की ओर कर देना चाहिए। यदि कामना करनी हो, तो ईश्वर की भक्ति की करनी चाहिए और ईश्वर ही को पाने के लिए लोभ करना चाहिए। यदि अहंकार ही करना हो तो 'मैं ईश्वर का दास हूँ' या 'मैं ईश्वर की संतान हूँ', ऐसा कहते हुए अहंकार करना चाहिए। संपूर्ण मन भगवान को दिए बिना उनका दर्शन नहीं होता और अपने दोष भी उनको अर्पित कर देने से काम, क्रोध भी सध जाते हैं।"

नववर्ष की मंगलकामना

परमसत्ता के अनुग्रह से नववर्ष में हम सबके जीवन में नया प्रकाश, उत्साह एवं लोक-मंगल का भाव उत्पन्न हो। हम सतत आत्मोन्नति के मार्ग पर चलते हुए, लोक-मंगल में निरत रहें।

❋ अखण्ड ज्योति संस्थान
मथुरा

❋ युग निर्माण योजना
मथुरा

❋ शांतिकुंज
हरिद्वार

प्रमुख पर्व-त्योहार– 2024

12	जनवरी	विवेकानंद जयंती/ राष्ट्रीय युवा दिवस
14	जनवरी	मकर संक्रांति
17	जनवरी	गुरु गोविंद सिंह जयंती
23	जनवरी	नेताजी सुभाष चंद्र बोस जयंती
26	जनवरी	गणतंत्र दिवस
30	जनवरी	शहीद दिवस
14	फरवरी	वसंत पंचमी/बोध दिवस
24	फरवरी	संत रविदास जयंती/माघी पूर्णिमा
08	मार्च	महाशिवरात्रि
12	मार्च	रामकृष्ण परमहंस जयंती/ फुलरिया दूज
24	मार्च	होलिका दहन
25	मार्च	होली, धूलिवंदन
29	मार्च	गुड फ्रायडे
09	अप्रैल	नवरात्रारंभ/संवत्सरारंभ
10	अप्रैल	ईदुलफित्र *
14	अप्रैल	आंबेडकर जयंती
17	अप्रैल	श्रीराम नवमी
21	अप्रैल	महावीर स्वामी जयंती
23	अप्रैल	हनुमज्जयंती/चैत्र पूर्णिमा
07	मई	रवींद्रनाथ टैगोर जयंती
10	मई	परशुराम जयंती/अक्षय तृतीया
23	मई	बुद्ध पूर्णिमा
06	जून	वट सावित्री
16	जून	गायत्री जयंती/गंगा दशहरा/ महाप्रयाण दिवस पूज्य गुरुदेव
17	जून	निर्जला एकादशी/ ईदुज्जुहा *
22	जून	कबीर जयंती
17	जुलाई	देवशयनी एकादशी/मुहर्रम *
21	जुलाई	गुरु पूर्णिमा (व्यास पूर्णिमा)
15	अगस्त	स्वतंत्रता दिवस
19	अगस्त	रक्षाबंधन
26	अगस्त	श्रीकृष्ण जन्माष्टमी
07	सितंबर	श्री गणेश चतुर्थी
08	सितंबर	ऋषि पंचमी
09	सितंबर	बलदेव छठ (देवछठ)
11	सितंबर	राधाष्टमी
15	सितंबर	वामन जयंती
17	सितंबर	विश्वकर्मा जयंती/महालयारंभ
18	सितंबर	महाप्रयाण दिवस वंद. माताजी
21	सितंबर	माता भगवती देवी शर्मा जयंती
30	सितंबर	पं. श्रीराम शर्मा आचार्य जयंती
02	अक्टूबर	गांधी/शास्त्री जयंती पितृमोक्ष अमावस्या
03	अक्टूबर	शारदीय नवरात्रारंभ
12	अक्टूबर	विजयादशमी
17	अक्टूबर	शरद पूर्णिमा/वाल्मीकि जयंती
20	अक्टूबर	करवा चौथ
30	अक्टूबर	धन्वंतरि जयंती/धनतेरस
31	अक्टूबर	रूप चतुर्दशी
01	नवंबर	दीपावली
02	नवंबर	गोवर्धन पूजा/अन्नकूट
03	नवंबर	भाईदूज/यमद्वितीया
07	नवंबर	सूर्य षष्ठी
10	नवंबर	अक्षय नवमी
12	नवंबर	देव प्रबोधिनी एकादशी/देवठान
14	नवंबर	बाल दिवस
15	नवंबर	गुरुनानक जयंती/देव दीपावली
11	दिसंबर	गीता जयंती/ मोक्षदा एकादशी
15	दिसंबर	दत्तात्रेय जयंती
25	दिसंबर	क्रिसमस

*चंद्रदर्शन के अनुसार परिवर्तनीय

मंगलवर्ष– 2024

जनवरी

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
	01	02	03	04	05	06
07	08	09	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30	31			

फरवरी

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
				01	02	03
04	05	06	07	08	09	10
11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24
25	26	27	28	29		

मार्च

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
31					01	02
03	04	05	06	07	08	09
10	11	12	13	14	15	16
17	18	19	20	21	22	23
24	25	26	27	28	29	30

अप्रैल

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
	01	02	03	04	05	06
07	08	09	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30				

मई

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
			01	02	03	04
05	06	07	08	09	10	11
12	13	14	15	16	17	18
19	20	21	22	23	24	25
26	27	28	29	30	31	

जून

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
30						01
02	03	04	05	06	07	08
09	10	11	12	13	14	15
16	17	18	19	20	21	22
23	24	25	26	27	28	29

जुलाई

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
	01	02	03	04	05	06
07	08	09	10	11	12	13
14	15	16	17	18	19	20
21	22	23	24	25	26	27
28	29	30	31			

अगस्त

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
				01	02	03
04	05	06	07	08	09	10
11	12	13	14	15	16	17
18	19	20	21	22	23	24
25	26	27	28	29	30	31

सितंबर

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
01	02	03	04	05	06	07
08	09	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30					

अक्टूबर

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
		01	02	03	04	05
06	07	08	09	10	11	12
13	14	15	16	17	18	19
20	21	22	23	24	25	26
27	28	29	30	31		

नवंबर

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
					01	02
03	04	05	06	07	08	09
10	11	12	13	14	15	16
17	18	19	20	21	22	23
24	25	26	27	28	29	30

दिसंबर

रवि	सोम	मंगल	बुध	गुरु	शुक्र	शनि
01	02	03	04	05	06	07
08	09	10	11	12	13	14
15	16	17	18	19	20	21
22	23	24	25	26	27	28
29	30	31				

शुभकामना

गूहता गुह्यं तमो वि यात विश्वमत्रिणम्।
ज्योतिष्कर्त्ता यदुश्मसि ॥

— ऋग्वेद 1/86/10

परमात्मा हमें अज्ञानांधकार से दूर ले जाएँ, प्रकाश का मार्ग प्रशस्त करें, ताकि सत्कर्म करते हुए हम सतत सन्मार्ग पर चलते रहें।

पूज्य गुरुदेव जैसा मैंने देखा-समझा–16

हिमालय की दिव्यता

हिमालय को वे जड़ नहीं चेतन मानते हैं। उमा–महेश से लेकर अन्य देवताओं की सघनता उस क्षेत्र में विद्यमान है, ऐसा वे अनुभव करते हैं। जब–जब वे वहाँ जाते हैं कुछ ऐसे विचित्र अनुभव सुनाते हैं, जिससे वहाँ देवसत्ता की प्रत्यक्ष उपस्थिति पर विश्वास करना पड़ता है।

एक बार कुछ जड़ी–बूटियों की खोज में रास्ता भटक गए और अपने स्थान से बहुत दूर संभवत: 20 मील आगे निकल गए। रात हो गई। हिंस्र पशुओं की आवाज गूँजने लगी। ऐसे समय में एक मनुष्य जैसा शरीर उन्हें हाथ पकड़कर आधे घंटे में ही यथास्थान पहुँचा गया।

एक बार वर्षा के पानी से उनका निवास एक ओर से घिर गया। खाद्य पदार्थ समाप्त। इसी समय एक मनुष्य का दिखना और हाथ के इशारे से जमीन खोदने का इशारा करना।

खोदा जाना और वहाँ से एक बीस सेर भारी एक ऐसे मीठे और स्वादिष्ट कंद का निकलना, जिस पर भली प्रकार निर्वाह किया जा सके। हिंस्र जंतुओं से आएदिन मुकाबला होते रहना, पर कुछ दुर्घटना न घटना।

एक बार किसी विपत्तिग्रस्त को सारे पैसे दे दिए। पास में कुछ भी न रहा। दूसरे दिन सिरहाने कामचलाऊ धन मिल जाना। उस क्षेत्र में निवास करने वाली दिव्य आत्माओं का आभास और उनसे भेंट करने का सुयोग आदि एक–से–एक बढ़कर ऐसे अद्‌भुत अनुभवों की शृंखला उस हिमप्रदेश की है, जिसे सुनते जादू–तिलस्म जैसे कथा–प्रसंग का रस आता है; पर उसमें अत्युक्ति की बात तनिक भी नहीं। उनका उच्च व्यक्तित्व, कुतूहलवर्द्धक गाथाएँ गढ़कर किसी को भ्रमित करने की चेष्टा करेगा यह तो कल्पना भी नहीं की जा सकती। फिर भी वे प्रसंग उन्होंने किसी को बताए भी तो नहीं।

वे सिर्फ उन्हें ही विदित थे, जिनमें से कुछ की एक हलकी–सी झाँकी इसलिए प्रस्तुत करनी पड़ी कि हिमालय की दिव्यता को समझा जा सके और उस खदान से बहुमूल्य रत्नों को उत्खनन करने का अन्य आत्मविद्या प्रेमियों को भी लाभ मिल सके। इन दिनों वे फिर इसी क्षेत्र में हैं।

लगता है वे भविष्य में भी वहीं से निरंतर दिव्य उपलब्धियाँ प्राप्त करने और सर्वसाधारण तक पहुँचाने का कार्य करेंगे। प्रतिबंधित अवधि तो वसंत पर्व तक की थी।

विवेक, वैराग्य, गुरु के वाक्य पर विश्वास—ये सब रहने पर फिर कोई कष्ट नहीं है। —*स्वामी रामकृष्ण परमहंस*

इसके बाद उनका उभयपक्षीय कार्यक्रम यही है—बादलों की तरह समुद्र से पानी लाना और खेतों पर बरसाना। हरिद्वार का मध्य केंद्र उनके इस ध्येय को पूरा करते रहने के लिए ही तो बना है।

वे हर वसंत पर बहुत कुछ प्राप्त करते रहे हैं और आगे के लिए अधिक दुस्साहसपूर्ण कदम बढ़ाते रहे हैं। उन्हें अपने पिता पर, हिमालय पर कितना गर्व, कितना विश्वास और कितना अवलंबन है, इसे समझने पर ही उनकी हिमालय प्रीति का अनुमान लगा सकना संभव हो सकता है। ❑

नालंदा विश्वविद्यालय का समृद्ध इतिहास

भारतीय इतिहास एक उस दौर से भी गुजरा है, जब हमलावरों-लुटेरों के लिए कोई भी अवध्य नहीं था, कुछ भी रक्षणीय नहीं था, दौलत से लेकर ज्ञान तक उन्होंने सबको लूटा-खसोटा। ऐसी ही अंधी लूट का शिकार हुआ था—नालंदा विश्वविद्यालय। बौद्धकाल का यह विश्वविख्यात विश्वविद्यालय इतिहास के पन्नों पर जैसा मिलता है, क्या वर्तमान में भी वैसा ही दिखता है? दुर्भाग्यवश आज यह खंडहर बन गया है।

चीनी यात्री ह्वेनसांग के यात्रा वृत्तांत, जिसका सैमुएल बील ने सन् 1884 में अँगरेजी में अनुवाद किया—उसको पढ़ने के बाद एक नई दृष्टि मिलती है। वी०एस० नायपॉल ने कहीं कहा है—जानकारी आपकी आकलन-क्षमता बढ़ाती है। ह्वेनसांग के यात्रा वृत्तांत के विस्तृत अध्ययन के बाद वहाँ जाना एक अलग ही अनुभव देता है।

प्राचीन नालंदा विश्वविद्यालय की रोचक जानकारियाँ इसमें हैं। यह वृत्तांत इस प्रकार है— मठ धूँ-धूँकर जल रहा था और तिब्बती साधु धर्मास्वामी नालंदा महाविहार के वयोवृद्ध कुलपति को बचाने के लिए इधर-उधर छिपते फिर रहे थे। वे सन् 1197 ई० की गरमियों के दिन थे। आतताइयों से उन्होंने अपने कुलपति को तो बचा लिया, किंतु विद्यापीठ को जलने से नहीं बचा सके और नालंदा महाविहार जलकर नष्ट हो गया। बचे रह गए ये खंडहर।

विचित्र अनुभव है, ठहरे हुए पत्थरों के साथ-साथ बहते हुए समय को देख पाना। इतिहास— किताबों और तारीखों से निकलकर, पत्थरों पर बनी आकृतियों, उन पर बैठे पक्षियों, उन पर पसरी अलसाई धूप के साथ मानो चल पड़ता है और तब सहसा बोध होता है कि इतिहास का असली जादू यही तो नहीं है? इन अचल पत्थरों के सामने खड़े-खड़े हम सहसा अपने से परे चले जाते हैं। एक ऐसे कालखंड में पहुँच जाते हैं, जब हम नहीं थे, किताबों में पढ़े एक-एक अक्षर सजीव होकर, जैसे हमारे साथ हो लेते हैं।

उन्हें भी आक्रमणकारियों ने जला डाला, बहुत सारे अमूल्य ग्रंथ उस आक्रमण में जलकर नष्ट हो गए। नालंदा विश्वविद्यालय के धर्मगंज नामक विभाग में तीन विशाल ग्रंथशालाएँ थीं, जिनमें असंख्य ग्रंथों का दर्शनीय संग्रह था। ग्रंथों का वर्गीकरण, उनके रखने का तरीका, उनके विषय-विभाग का विवरण, उनके उपयोग के नियम आदि तब की सुव्यवस्था के सूचक थे।

नालंदा विश्वविद्यालय का प्रारंभ एक बौद्ध-विहार के रूप में हुआ था। इसमें अनेक स्थविर और भिक्षुगण निवास करते थे। बौद्ध साहित्य में नालंदा का बड़ा महत्त्व है। नालंदा ने सारिपुत्र और मौद्गल्यायन जैसे मनीषियों को पैदा किया। सारिपुत्र भगवान बुद्ध के प्रधान शिष्य थे और उन्हें धर्म-सेनापति की उपाधि से विभूषित किया गया था। नालंदा के खंडहरों से पूरब की ओर बसा था सारिचक गाँव। इसी गाँव में सारिपुत्र का जन्म हुआ था।

बौद्ध ग्रंथों के अनुसार इसका प्राचीन नाम नालक था। संभवतया सारिपुत्र के कारण ही इसका

नाम सारिचक पड़ा हो। भगवान बुद्ध नालंदा अनेक बार आए। उन्होंने नालंदा में एक वर्ष आवास भी किया था। बौद्ध-विहार और संघाराम के रूप में नालंदा की कीर्ति भगवान बुद्ध के जीवनकाल से प्रारंभ हो गई थी। पाँच सौ व्यापारियों ने इसे दस कोटि सोने की मुहरों से खरीदकर भगवान बुद्ध को समर्पित कर दिया था। बुद्ध ने तीन महीने तक यहाँ रहकर धर्मोपदेश दिया।

बुद्ध के निर्वाण के कुछ ही दिनों बाद, यहाँ के राजा शक्रादित्य ने उचित स्थल को पहचानकर एक संघाराम का निर्माण कराया। जब निर्माण-कार्य चल रहा था तब खुदाई के दौरान एक नाग जख्मी हो गया, उस वक्त यहाँ पर एक भविष्यवक्ता आया।

इस घटना को देखकर उसने कहा—"यह बहुत उच्चकोटि का स्थल है, अगर आप यहाँ संघाराम बनवाते हैं तो निश्चित ही वह बहुत प्रसिद्ध होगा, दूर-दूर तक इसकी ख्याति फैलेगी, हजार वर्षों तक यह समृद्ध रहेगा। यहाँ के छात्र सभी विषयों में पारंगत होंगे, किंतु एक बात याद रखें—इस नाग के जख्मी होने के कारण यहाँ के अनेक लोगों को खून की उलटी की बीमारी होगी।"

तिब्बती इतिहासकार तारानाथ के अनुसार, अशोक के प्रयत्नों से नालंदा एक शिक्षाकेंद्र के रूप में परिवर्तित होने लगा था। भगवान बुद्ध के महापरिनिर्वाण के बाद शक्रादित्य, तथागत गुप्त, बालादित्य और वज्र नामक राजाओं ने नालंदा में एक-एक संघाराम बनवाया। इतिहासकारों के अनुसार 450 ई० के आस-पास बौद्ध बालादित्य के राज्यकाल में नालंदा-विहार एक विश्वविद्यालय के रूप में स्थापित हो चुका था। मगध साम्राज्य में यह विश्वविद्यालय प्रथम श्रेणी का शिक्षाकेंद्र बन गया।

मगध साम्राज्य में चार महाविहार थे—वज्रासन (बोधगया), नालंदा, उदयपुर और विक्रमशिला। धार्मिक दृष्टि से वज्रासन का महत्त्व अधिक था, किंतु साहित्य और शिक्षा की दृष्टि से नालंदा सर्वश्रेष्ठ था। कहते हैं कि जब आचार्य दीपंकर श्रीज्ञान से नालंदा के आचार्यों ने पूछा कि वे विक्रमशिला छोड़कर यहाँ क्यों आए, तब उन्होंने नालंदा की प्राचीनता तथा उसकी अनेक विशेषताएँ बतलाकर अपने आने का कारण समझाया था।

यह सही भी था। सुदूर चीन, जापान, तिब्बत, स्याम, बर्मा, मलय, मध्य एशिया आदि अनेक देशों से तब ज्ञान-पिपासु शिक्षा प्राप्त करने नालंदा आने लगे थे। अठारह बौद्धनिकायों के ग्रंथों के अतिरिक्त वैद्यक, दर्शन, साहित्य, अनेक प्रकार के कला-कौशल, ब्राह्मण-दर्शन, जैन-दर्शन आदि की भी शिक्षा यहाँ दी जाती थी। यहाँ दाखिले के लिए द्वार-परीक्षा में उत्तीर्ण होना आवश्यक था। परीक्षा में गद्य-व्याकरण और पद्य-तर्कशास्त्र, मेटाफिजिक्स आदि विषय होते थे। ह्वेनसांग लिखता है—यह द्वार-परीक्षा बहुत कठिन होती थी, इसमें अनुत्तीर्ण होने वाले छात्रों की संख्या चालीस प्रतिशत से कम नहीं होती थी। इससे प्रतीत होता है कि नालंदा विश्वविद्यालय का स्तर काफी ऊँचा था।

इस विश्वविद्यालय के बारे में अधिक जानने के लिए ह्वेनसांग के यात्रा-वृत्तांत का सहारा लेना पड़ता है। वे लिखते हैं कि यहाँ हजारों की संख्या में धर्माचार्य हैं, जिनकी क्षमता और विद्वत्ता उच्चकोटि की है। वर्तमान में इनकी विशिष्टता महान है और इनमें से सैकड़ों ऐसे हैं, जिनकी प्रसिद्धि दूर के देशों तक फैली है। इनका आचरण शुद्ध और निष्कलंक है। ये नीतिशास्त्र के आदेशों का ईमानदारी से पालन करते हैं। विद्यापीठ के नियम अतिकठिन हैं, उनका पालन करना सारे धर्माचारियों के लिए

अनिवार्य है। भारतवर्ष के लोग इनका सम्मान और अनुकरण करते हैं।

यह कैसी विडंबना है कि हमें अपने इतिहास को जानने के लिए विदेशी यात्रियों, पर्यटकों के यात्रा वृत्तांतों का सहारा लेना पड़ता है। यह अक्सर होता रहा है, कभी हम ह्वेनसांग की मदद लेते हैं तो कभी फाह्यान की, कभी हमें अल्बरूनी की कभी बुकानन तो कभी कनिंघम हमारी मदद को आगे आते हैं।

ह्वेनसांग और फाह्यान के यात्रा-वृत्तांतों की मदद से तो कई प्राचीन ऐतिहासिक स्थलों की खोज में भी काफी मदद मिली है। वैडेल ने भी ह्वेनसांग के यात्रा-वृत्तांत का सहारा लेकर ही प्राचीन पाटलिपुत्र के अवशेषों को खोज निकाला था—ऐसे अनेक उदाहरण हैं।

मुख्य स्तूप (पुरातत्त्व वालों ने इसे टेंपल साइट-3 नाम दे रखा है) निचले प्रकोष्ठों में बने 'स्टाको' (सुर्खी और चूने से बनी कलात्मक प्रतिमाएँ) के बहुत नजदीक हैं। उनमें से कई स्टाको अब वहाँ नहीं हैं, नष्ट हो चुके हैं। जो बचे रह गए हैं, वे अपने पूरे कलात्मक सौंदर्य के साथ उन दिनों वहाँ मौजूद थे। भगवान बुद्ध ने तीन महीने तक जिस स्थान पर रहकर धर्मोपदेश दिया था, उसी स्थान पर, उन्हीं की स्मृति में मुख्य स्तूप बनाया गया था।

यह स्थान छोटे-छोटे अनेकों स्तूपों से घिरा है; थोड़ी दूर, दाईं ओर आगे बढ़ने पर टेंपल साइट-2 है। यह मंदिर पत्थरों से बना है, इसमें ईंटों का कहीं भी प्रयोग नहीं दिखता है, यह करीब दो सौ से अधिक छोटे मूर्तिशिल्पों से अलंकृत है एवं इसके विषय हिंदू धर्मग्रंथों से लिए गए हैं।

मंदिर के दाईं ओर, दूर तक मठों के अवशेष बिखरे पड़े हैं। इनके बारे में ह्वेनसांग लिखता है, नालंदा विश्वविद्यालय के साथ के विहार में आठ विस्तृत कक्ष और तीन सौ प्रकोष्ठ थे। सभागृह दस भागों में बँटा था, शिक्षार्थियों के रहने के लिए भिन्न-भिन्न भागों में तीन सौ भवन थे। तीन विशाल ग्रंथालय थे।

इन पुस्तकालयों में हीनयान, महायान, वज्रयान आदि बौद्ध तथा अन्य संप्रदायों के अनेक विषयों के ग्रंथ संगृहीत थे। इस विश्वविद्यालय के खरच को पूरा करने के लिए बौद्ध सम्राटों ने सैकड़ों गाँव दान में दिए थे। विश्वविद्यालय की अपनी मुहर थी।

नालंदा में सिर्फ पुस्तकों से ही शिक्षा नहीं दी जाती थी, यह अपनी मूर्तिशिल्प शैली के लिए भी विख्यात था। यहाँ पत्थरों और कांस्य(ब्रांज) से उत्कृष्ट मूर्तियाँ बनाने की शिक्षा दी जाती थी, खंडहरों की खुदाई में मिली भट्ठी और अनेक प्रकार के साँचे इस बात के प्रमाण हैं।

यह भी पता चलता है कि यहाँ पीतल, ताँबा और दूसरी अनेक धातुओं के उपयोग की शिक्षा भी दी जाती थी। कनिंघम ने इस इलाके में पाई जाने वाली मूर्तियों को 'हिंदुस्तान का सर्वश्रेष्ठ शिल्प' माना है। पालकाल की अनेक उत्कृष्ट मूर्तियाँ नालंदा से ही मिली हैं। यहाँ सचित्र पांडुलिपियाँ तैयार करने की भी शिक्षा दी जाती थी।

नालंदा विश्वविद्यालय के शिक्षा विभाग में आर्यदेव, शीलभद्र, धर्मपाल, चंद्रगोमेन, शांतरक्षित, पद्मसंभव, कमलशील, स्थिरमति, बुद्धिकीर्ति, कुमारश्री, सुमतिसेन आदि अनेक उच्चकोटि के विद्वान थे। इनमें शांतरक्षित का नाम विशेष रूप से उल्लेखनीय है।

उनके समय में नालंदा विश्वविद्यालय विश्वप्रसिद्ध हो चुका था। शांतरक्षित तिब्बत के शासक ग्रीन-दू-त्सान के आमंत्रण पर तिब्बत गए थे और शासक के मृत्युपर्यंत वहाँ रहे थे। नालंदा के ही महापंडित पद्मसंभव ने तिब्बत में लामावाद की शुरुआत की थी। यह सब आठवीं सदी की बात है।

आक्रमणकारियों ने नालंदा विश्वविद्यालय को बड़ी निष्ठुरता से नष्ट किया। इसकी साक्षी हैं—वहाँ की जली हुई ईंटें, जली हुई चौखटें, जले हुए चावल के दाने—ये सब-के-सब यहाँ खुदाई में मिले हैं। हम सब उन्हें देखना चाहें तो जाकर संग्रहालय में देख सकते हैं। नालंदा विश्वविद्यालय का नष्ट होना बिहार के इतिहास की एक युगप्रवर्तक घटना थी। उसने बिहार के इतिहास की दिशा ही बदल दी।

सन् 1197 ई० में मुहम्मद बिन बख्तियार खिलजी ने बिहार सूबे को अपने अधीन कर लिया था। उसने बड़ी निष्ठुरता के साथ उदंतपुर, नालंदा और विक्रमशिला के मठों और विश्वविद्यालयों को नष्ट किया, अमूल्य पुस्तकों को जलाकर राख कर दिया।

उसने वहाँ रह रहे धर्माचार्यों एवं छात्रों को भी नहीं छोड़ा। उसने उनकी हत्या करवाई तो इस तरह हजार वर्षों तक हिंदुस्तान का गौरव रहा नालंदा महाविहार नष्ट हो गया। पंद्रहवीं सदी के तिब्बती इतिहासकार तारानाथ ने लिखा है—बख्तियार ने अपनी इस जीत के प्रतीक के रूप में उदंतपुर में एक किले का निर्माण भी कराया। उसकी हिंसकता और असहिष्णुता ने बौद्ध धर्म को अपूरणीय क्षति पहुँचाई।

अपने जन्मस्थल पर ही बौद्ध धर्म का अस्तित्व लगभग समाप्त हो गया। धीरे-धीरे लोग नालंदा महाविहार को भूलने लगे और काल के कपोल तले यह स्थल आखिरकार एक टीले में परिणत हो गया। फ्रांसिस बुकानन वह पहला व्यक्ति था, जिसने नालंदा महाविहार को काल के गर्त से खोजने की शुरुआत की। उसने इस स्थान का सर्वेक्षण भी किया। सन् 1861-62 ई० में एलेक्जेंडर-कनिंघम को महाविहार के खंडहरों की खोज में सफलता मिली।

सन् 1870 ई० में ब्रॉडली ने भी इसके कुछ हिस्सों की खुदाई की, किंतु योजनाबद्ध तरीके से खुदाई का काम सन् 1916 ई० में स्पूनर ने किया। इसके बाद अगले बीस वर्ष तक विभिन्न पुरातत्त्ववेत्ताओं द्वारा खुदाई की जाती रही। पं० हीरानंद शास्त्री(अज्ञेय के पिता) ने खुदाई के इस काम को पूरा किया।

तब नालंदा महाविहार की महत्ता को दुनिया ने स्वीकारा। यूनेस्को ने इसे 'वर्ल्ड हेरिटेज साइट' का दर्जा दिया। आज इसके पुरातन गौरव को पुन: प्रतिष्ठित करने की आवश्यकता है। ❑

छोटे बालक ने माँ से पूछा—''माँ! कौआ और कोयल दोनों ही काले हैं, पर लोग कौए को मारते और कोयल को प्यार क्यों करते हैं ?''

माँ ने उत्तर दिया—''बेटा! सम्मान रूप के आधार पर नहीं, गुणों के आधार पर मिलता है। कोयल मीठी वाणी बोलती है और अपनी इन्हीं भावनाओं की मधुरता के कारण वह सबकी प्रिय बन गई है; जबकि कौआ अप्रिय वचन बोलने के कारण स्वार्थी व धूर्त माना जाता है और जनसामान्य के सम्मान से वंचित रह जाता है।'' रूपवान अपने रूप के कारण दूसरों को क्षणिक रूप से आकर्षित जरूर कर सकते हैं, परंतु दीर्घकाल तक सम्मान के अधिकारी तो गुणवान ही होते हैं।

विषम परिस्थितियों में हमारे दायित्व

(प्रथम किस्त)

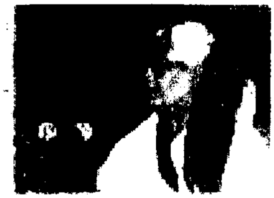

परमवंदनीया माताजी के उद्‌बोधनों की यह विशिष्टता है कि उनके शब्द न केवल भावनात्मक दृष्टि से परिजनों को उत्साहित एवं प्रेरित करते हैं, वरन वे गायत्री परिवार के मूल उद्‌देश्यों की प्राप्ति हेतु जुट जाने के लिए आंदोलित भी करते हैं। अपने एक ऐसे ही प्रस्तुत उद्‌बोधन में वंदनीया माताजी वर्तमान परिस्थितियों का आकलन करते हुए कहती हैं कि वर्तमान समय की परिस्थितियाँ बड़ी ही विषम परिस्थितियाँ हैं और ऐसे में हमारे अंतःकरण के अंदर जो नकारात्मक शक्तियाँ विद्यमान हैं, उनके विरुद्ध खड़े होने की और जुट जाने की आवश्यकता है। वे कहती हैं कि हम लोग स्वार्थ को त्याग दें, नारकीय जीवन को त्याग दें एवं पूज्य गुरुदेव द्वारा दिखाए गए पथ का अनुकरण करें। वंदनीया माताजी वर्तमान समय में सब कुछ भूलकर एकमात्र उद्‌देश्य के लिए अपने जीवन को निरत कर देने का संकल्प लेने को कहती हैं। आइए हृदयंगम करते हैं उनकी अमृतवाणी को........

विपरीत हैं परिस्थितियाँ

गायत्री मंत्र हमारे साथ-साथ—

ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्।

हमारे आत्मीय परिजनो! जब विपरीत परिस्थितियाँ आती हैं, तो अनेक जटिल समस्याएँ लेकर के आती हैं। जब कभी भी पारिवारिक जीवन में, सामाजिक जीवन में, राष्ट्रीय स्तर पर, अंतरराष्ट्रीय स्तर पर विपरीत परिस्थितियाँ आईं हैं, तो आपने देखा होगा कि अनेक विपरीत परिस्थितियों ने जन्म लिए हैं।

अनेक ऐसी-ऐसी जटिल समस्याएँ आती चली जाती हैं कि व्यक्ति यदि गहराई से सोचे और उनका अध्ययन करे, तो मालूम पड़ेगा कि उसमें कितनी जटिलता है और इनको किस तरीके से सुलझाया जाना चाहिए?

जब बुखार आता है, तो शरीर में पीड़ा होती है, सर में दरद होता है, खाना हजम नहीं होता, भूख नहीं लगती है, पाँव लड़खड़ाते हैं, चला नहीं जाता, शरीर में गरमी होती है, उठने का मन नहीं होता। ये विपरीत परिस्थितियाँ हैं। ज्यों ही बुखार आया, बुखार के साथ-साथ अनेक पीड़ाओं ने जन्म ले लिया। इसी तरीके से जो विपरीत परिस्थितियाँ आती हैं, उनके साथ-साथ अनेक जटिल परिस्थितियाँ जन्म लेती हैं। हूबहू वही समय आज का है।

युगसंधि पुरश्चरण का जो संकल्प लिया गया है, इन्हीं परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए यह बारह वर्ष का संकल्प लिया गया है। जिसके बारे में कल आपकी गोष्ठी हो रही थी, तो मैंने आप से निवेदन किया था कि महाभारत में कृष्ण ने यदि अर्जुन को नहीं झकझोरा होता और यह नहीं कहा होता कि उठो! हमारे देश की, काल की और राष्ट्र

की यह विषम परिस्थितियाँ हैं। आपको उठना चाहिए।

जब अर्जुन नहीं उठा, तो कृष्ण ने उसके पौरुष को ललकारा और यह कहा कि जनखे! कौरवों से नहीं लड़ेगा तू? तो चूड़ियाँ पहनकर घर में बैठ। सामने परिस्थितियाँ दिखाई नहीं दे रही हैं? ये हाहाकार और चीत्कारें कानों में नहीं आ रही हैं? उन्होंने उसके पौरुष को ललकारा और यह कहा कि जनखे! घर में बैठेगा? नहीं, तो फिर इन कौरवों से लड़? तेरे सारथी हम बनेंगे। कृष्ण ने जब यह आवाज उठाई, तो अर्जुन लड़ने के लिए विवश हो गया। उसको लड़ना पड़ा और लड़ना चाहिए।

नारकीय जीवन त्यागें

हमारे अंत:करण में कौरवों का जो निवास है, मैं प्रत्येक से कहूँगी कि आप उसके विरुद्ध उठ खड़े हों। हमारे अंत:करण में जो कौरव विराजमान हैं, इनको हटाने के लिए, इनको मारने के लिए, इनको दबोचने के लिए, इनका दमन करने के लिए प्रत्येक परिजन को आगे आना पड़ेगा। प्रत्येक को अपनी रस्साकशी स्वयं करनी पड़ेगी और करनी चाहिए।

यदि आपने नहीं किया, तो बेटे! हमको भी शरम आएगी कि आप हमसे जुड़े हैं, गुरुजी से जुड़े हैं, गुरुजी के शिष्य हैं, हमारे बेटे हैं। फिर आपने तो हमारा सर नीचा कर दिया है कि उस शक्ति से, उस समर्थ सत्ता से जुड़े होते हुए भी आप ऐसा नारकीय जीवन जिएँगे?

आप नारकीय जीवन नहीं जिएँगे। आप आगे की पंक्ति में आएँगे; क्योंकि आप उस ऋषि की संतान हैं, आप उस संत की संतान हैं, उस महामानव की संतान हैं, जिससे कि आप सर ऊँचा करके गौरव पा सकते हैं।

बेटे! जो भी यहाँ आता है, वह यह देखता हुआ चला जाता है और प्रभावित होता हुआ चला जाता है कि आखिर यहाँ ऐसी क्या चीज है? जिससे हर व्यक्ति चिपकता हुआ चला जाता है। आप इतनी दूर से आए हैं, कहाँ रीवा, कहाँ हरिद्वार। आपको यहाँ कुछ मिल रहा है? नहीं, यहाँ कुछ नहीं मिल रहा है। आखिर ये क्या बात है? एक ही चीज है और वह चीज है—हमारा स्नेह, वह चीज है—हमारा प्यार, वह चीज है—हमारी सहृदयता, जो आपको खींच करके यहाँ तक लाई है। वह है—हमारी प्रेरणा, वह है—हमारा झक-झोरनापन, जो आपको यहाँ लेकर के आई है। इस शीतकाल के समय में आप आए हैं। कितनी ठंढक है। आपके रीवा में इतनी ठंढ पड़ती है? नहीं, इतनी नहीं पड़ती। यहाँ पड़ती है। कहीं, कोई अंश आपके अंदर ऐसा है, जैसा कि हम चाहते हैं।

बेटे! भगवान राम के समय में क्या भगवान राम ने अकेले काम किया था? नहीं, बेटे! अकेले ने काम नहीं किया था। उनके साथ रीछ और वानर थे। रीछ और वानर कौन थे? वे देवता थे और उन्होंने यह संकल्प लिया था कि भगवान राम के काम में हम हाथ बँटाएँगे, हम हिस्सा बँटाएँगे, हम कंधे-से-कंधा मिलाकर के काम करेंगे।

नहीं साहब! हमारी तो औरत है, हमारी तो चाची है, हमारी तो नानी है, अपने स्वार्थों को छोड़कर के हम कैसे जा सकते हैं? नहीं, परमार्थ के लिए स्वार्थों को त्यागना पड़ता है।

स्वार्थ को त्याग दें

जिसने स्वार्थ को त्याग दिया है, उन कौरवों को मार दिया है, वही व्यक्ति सच में अर्जुन हो सकता है और वही व्यक्ति सच में कृष्ण हो सकता है, जो कि परमार्थ के लिए आगे चलता है और सबको ज्ञान देता है। आप में से कोई भी हो सकता है। कृष्ण के समय में ग्वाल-बाल थे। राम के समय

में रीछ-वानर थे और बुद्ध के समय में उनके साथ अनेकों व्यक्ति थे।

बुद्ध क्या थे? बुद्ध एक मार्गदर्शक थे, प्रेरणा थे। उनके साथ-साथ चलने के लिए अनेक व्यक्ति तैयार हो गए, जिसमें कि एक आम्रपाली वेश्या थी, अंगुलिमाल थे, महेंद्र थे और संघमित्रा थी, अशोक के दोनों बच्चे थे। उन्होंने यह शपथ ली थी कि हम बुद्ध का काम करने के लिए कटिबद्ध हैं।

उनका नाम आज भी हम लेते हैं और बड़े गर्व से लेते हैं कि लोक-मंगल के लिए व्यक्ति को निकलना चाहिए और वह निकले। अकेले बुद्ध ने किया था? नहीं, अकेले बुद्ध ने नहीं किया। किसने किया? जो उनके साथ जुड़े थे, उन्होंने किया और शक्ति किनकी थी? शक्ति बुद्ध की थी। गांधी जी स्वतंत्रता लेकर के आए थे? नहीं, गांधी जी लेकर नहीं आए थे; लेकिन गांधी जी प्रेरणास्त्रोत थे, लाखों व्यक्ति जिनके साथ में होते थे। लोभ और मोह की जंजीरों से निकलिए। उनको तोड़कर फेंकिए। जहाँ कहीं भी लोभ व्याप्त है, जहाँ कहीं भी मोह व्याप्त है, उसको तोड़िए।

इन परिस्थितियों में हमारे कर्त्तव्य

अभी जो मैंने आप से निवेदन किया था कि जब विषम परिस्थितियाँ आती हैं, तब प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है कि उन विषम परिस्थितियों से टकराने के लिए, उनका दमन करने के लिए, लोगों का हौसला बढ़ाने के लिए आगे आना चाहिए। यदि आप लोगों ने यह हौसला नहीं दिखाया, आप लोगों की हिम्मत नहीं हुई, तो कल आने वाला समय हमको भी धिक्कारेगा और आपको भी धिक्कारेगा। हमको हजार बार धिक्कारेगा और यह कहेगा कि ये बुद्धिजीवी थे, ये ज्ञानवान थे, ये संत थे, ये ऋषि थे?

हमने देख लिया इनका मिशन और देख लिए इनके ये बेटे, यह मत कहलवाना। हमको मरना मंजूर है; लेकिन कलंक का यह टीका लगाना हमें मंजूर नहीं है। कभी भी नहीं हुआ और आजीवन नहीं होगा। हम उस पथ के राही हैं कि हम स्वयं रोशनी देखते भी हैं और दिखाते भी हैं, चलते भी हैं और चलाते भी हैं। कष्ट साध्य जीवन जीते भी हैं और जिलाते भी हैं।

आपने यहाँ कितने कार्यकर्त्ता देखे हैं, आपको मालूम है न? यहाँ डॉक्टर भी हैं, इंजीनियर भी हैं और भी हैं, बच्चे जो अपनी नौकरी छोड़-छोड़कर आए हैं। इनका त्याग कम है क्या? बेटे! बिलकुल त्याग कम नहीं है। उनका ज्यादा है; लेकिन जब कहीं भी हम कमी पाते हैं, तो निस्संकोच उसको इतना कसते हैं कि बस चीं बोल जाता है। बेटे! तेरा त्याग एक ओर और तेरी कमियाँ, गलतियाँ एक ओर, जो सारे त्याग पर पानी फिरा देंगी।

अयोध्या में श्रीराम का राज्याभिषेक होने के पश्चात एक दिन सभा में लंका की चर्चा होने लगी। हनुमान जी बोले— ''अशोक वाटिका में कमल के फूल लाल रंग के थे।'' सीता जी कहने लगीं—''फूल सफेद रंग के थे।'' भगवान राम विवाद सुलझाते हुए बोले—''पुष्प सफेद रंग के ही थे, पर उस समय माँ सीता की यह स्थिति देखकर हनुमान जी को क्रोध आया, जिससे उन्हें वे पुष्प लाल रंग के दिखे।''

वस्तुतः जैसा अंदर होता है, वैसा ही बाहर दिखाई देता है।

गुरुदेव का अनुकरण करें

आपने यहाँ हमारी जीवंत मूर्तियों को देखा है। देखा है, तो आप अनुकरण करिए। गुरुजी का अनुकरण करिए जो कि 18 घंटे श्रम करते हैं, पूजा-उपासना उनकी अलग है। 6 घंटे की नित्य प्रति उनकी उपासना चलती है, लेकिन बाकी का कितना श्रम करते हैं, वह आपको मालूम है? नहीं, आपको मालूम नहीं है। आपको ज्ञान है? नहीं, बिलकुल ज्ञान नहीं है। जानकारी है? हाँ, जानकारी तो आपको है, लेकिन उस जानकारी को आपने हृदय में नहीं उतारा है।

यदि हृदय में आप उतार लेंगे, तो फिर आप यह नहीं कहेंगे कि हमारी अमुक कष्ट-कठिनाइयाँ हैं। हमारे बच्चियाँ ही होती हैं, हमारे बच्चा नहीं है। फिर बेटे! आप उसी तरीके से आएँगे, जैसे समर्थ गुरु रामदास के पास शिवाजी गए थे और विवेकानंद अपने गुरु के पास गए थे। उनको क्या मिला था? एक ही चीज मिली थी, वह मिली थी—शक्ति, वह मिला था—साहस, वह मिला था—पुरुषार्थ।

क्या गुरुजी से माँगें

बेटे! उन्होंने एक ही बात कही थी कि जो हमारे पास है, हम दे सकते हैं, जो हमारे पास है ही नहीं, तो हम वह देंगे कहाँ से। लाओ साहब गुरुजी! रुपया दे दो। गुरुजी पर रखे हैं रुपये, जो दे देंगे गुरुजी? गुरुजी के पास तो एक छदाम नहीं रहता। आज तक कभी भी उनकी जेब में एक चार पैसे नहीं निकले, तो तुम्हें कहाँ से दे देंगे, बताइए? बोल दे देंगे?

नहीं। हनुमान जी के पास जा और हनुमान जी से कहो कि हे हनुमान जी! हमारे बच्चा पैदा कर दो, हमारी शादी करा दो। अरे हनुमान जी तो जिंदगी भर ब्रह्मचर्य से रहे थे, तुम्हारा ब्याह कहाँ से करा देंगे, तुम्हारे बाल-बच्चे कहाँ से पैदा करा देंगे? यदि हनुमान जी से माँगना है, तो वह पराक्रम माँगिए, वह हिम्मत माँगिए, वह हौसला माँगिए, जिससे कि वे समुद्र को लाँघ गए थे और लंका में आग लगा दी थी। वह चीज तो आप माँगते नहीं, फिजूल की चीजें माँगते हैं।

कौन-सी चीज माँगते हैं? वह माँगते हैं, काँच के ठीकरे, जो आपके जीवन में कभी काम आने वाले नहीं हैं। माँगिए, माँगना है तो हीरा माँगिए न। हीरा जैसा जीवन माँगिए। जहाँ कहीं भी आप जाएँ, आपको देखकर के व्यक्ति यह कह दे कि हाँ भाई बड़े कमाल का व्यक्ति है। अरे देखना है, तो उसको देखिए, जिसमें कोई भी दाग-धब्बा नहीं है। प्रलोभन फटककर भी उसके पास नहीं गया है। आप उसको देखिए। आपके ऊपर वह प्रभाव पड़ना चाहिए।

जो गुरुजी के अंदर अग्नि जल रही है, मैं तो आपसे एक ही निवेदन करूँगी कि उसमें से एक चिनगारी भी आप ले जाएँ। संपूर्ण नहीं ले पाए, तो एक चिनगारी भी आप अपने साथ लेकर के जाएँगे,

---

किसी को अपनी प्रशंसा न करते देख हताश होकर तितली बोली—''झींगुर बंधु! जरा मुझे तो देखो। मैं अप्रतिम सुंदरी हूँ।''

झींगुर ने उत्तर दिया—''बहन तितली! सौंदर्य का सही मानदंड अंतःकरण की पवित्रता है न कि बाहरी शृंगार। वो उभरे तो उस सुंदरता की सभी प्रशंसा करते हैं।'' यह वचन जीवन के एक शाश्वत सत्य के रूप में सभी पर समानरूपेण परिभाषित होता है।

तो आप धन्य हो जाएँगे। वह चिनगारी आपको बैठने नहीं देगी।

क्या कारण है कि आज हमारे समाज में जो विकृतियाँ फैली हुई हैं, उनके प्रति हम जरा भी सजग नहीं हो पाते हैं? क्यों नहीं हो पाते? छुआछूत के नाम पर, लिंग भेद के नाम पर, दहेज के नाम पर आएदिन हमारी बच्चियाँ आत्महत्या करती हैं, जला दी जाती हैं।

क्या ये बुद्धिजीवी वर्ग का काम नहीं है कि वह हिम्मत से आगे आए और यह संकल्प ले और दूसरों को भी संकल्प दिलाए कि हम अपने बच्चों की शादी में दहेज नहीं लेंगे। लेकिन हम ऐसे हैं, जिसे संकीर्ण कहेंगे या ये कहेंगे कि पाषाण हैं, जिनके हृदय में जरा भी कोमलता नाम की चीज नहीं है।

कैसा सिद्धांतवाद है यह?

जो आगे हाथ फैलाता है और बड़ा सिद्धांतवादी बनता है। कहता है कि साहब! हम नहीं माँगते। हम नहीं माँगते, तो कौन माँगता है? हमारी औरत माँगती है। अच्छा, औरत की इतनी हिम्मत हो गई है? औरत कभी नहीं माँग सकती। नर में जरा-सी ताकत है, जो सारे दिन जद्दोजहद करता है, तो क्या इस बात के लिए जबान नहीं निकलती कि न हम दहेज लेंगे और न हम देंगे, देंगे भी नहीं।

मान लीजिए कहीं कोई ऐसी परिस्थिति आ गई, जो हमको मजबूर होना पड़ा, तो बात अलग है। हम तो कहेंगे कि मजबूर होइए ही मत। हम अपनी कन्या की शादी बड़े आदमी में नहीं करेंगे, तो छोटे में करेंगे। डॉक्टर से न करेंगे, इंजीनियर से करेंगे, इंजीनियर न मिलेगा, तो टीचर मिलेगा, कोई तो मिलेगा। हम तो रिक्शा चालक से कर देंगे, पर हमें यह भेड़िया नहीं चाहिए।

हम अपनी कन्या को भेड़ियों के लिए दे देते हैं, जो हमारी कन्याओं को निगलता हुआ चला जाता है। क्या हमारे हृदय पर जरा भी वज्रपात नहीं होता। बेटे! हम विचार ही नहीं करते। हमारे सामने जो निजी समस्याएँ होती हैं, उन्हीं में उलझे रहते हैं। देशव्यापी या राष्ट्रव्यापी भावना हमारे अंदर जरा भी उत्पन्न नहीं होती है कि हमको राष्ट्र के भी काम आना है क्या? राष्ट्र का भी कुछ हमारे ऊपर उत्तरदायित्व है? हमारी कोई जिम्मेदारी है क्या?

जिम्मेदारी निभाइए

बेटे! हमने तीन बातों का आह्वान किया और यह कहा कि मनुष्य में देवत्व का उदय किस तरीके से होगा? जो प्रलोभन से दूर होंगे। दूसरी है— जिम्मेदारी। गुरुजी ने हमेशा कहा कि हर व्यक्ति को अपनी जिम्मेदारी महसूस होनी चाहिए। पारिवारिक जिम्मेदारियाँ जितनी हमारे ऊपर हैं, उसके लिए तो बड़े खुशी से और मनोबल से हम सारा दिन उस चक्की में पिसते रहते हैं, लेकिन हम समाज के लिए दो-चार घंटे भी बचा पाते हैं क्या? नहीं, हम नहीं बचा पाते। तो यह जिम्मेदारी कहाँ है? आप जिम्मेदारी निभाइए और समझदारी की सूझ-बूझ दीजिए।

नहीं साहब! नासमझ के तरीके से जिधर भेंड़ें चल रही हैं, उधर ही हम चलेंगे। क्यों चलेंगे? उतनी समझ आप में होनी चाहिए। समझदारी, जिम्मेदारी के साथ गुरुजी ने एक और बात कही थी—बहादुरी। बहादुरी क्या चीज होती है? अभी मैंने आपके सामने हनुमान जी का उदाहरण दिया, रीछ-वानरों का दिया और ग्वाल-बालों का दिया। मैंने स्वतंत्रता आंदोलन का भी दिया कि व्यक्ति किस हिम्मत के साथ, किस तेजी के साथ सामने आता हुआ चला जाता है, तो जो सारी विपरीत परिस्थितियाँ हैं, वो चकनाचूर हो जाती हैं।

आप तो इतने बैठे हैं, अकेले-अकेले व्यक्तियों ने कितना कार्य किया है। गुरुजी ने इतना बड़ा संगठन खड़ा किया?

विश्व का पहले नंबर का संगठन

सन् 1970-71 में तो यहीं चले आए। अपनी एक कोठरी में बैठकर पत्र-व्यवहार से लेकर के, लेखन से लेकर के और वाणी से लेकर जो भी कुछ कर सकते थे, वो सारा उन्होंने किया और इतना बड़ा संगठन तैयार किया। इतना बड़ा संगठन जो आज पहले नंबर का नहीं, तो हमारा दूसरे नंबर का है।

अब यह वह संगठन है कि जिधर हम अपनी सेना को भेज दें, बस, उधर ही बढ़ती हुई चली जाएगी और विजय पाती हुई चली जाएगी। हम जिस क्षेत्र में इसे खड़ा कर दें, राजनीति में भेज दें, तो कमाल हो जाएगा। अभी हमको ऐसे व्यक्ति दिखाई नहीं पड़ते और जिस दिन हमको दिखाई पड़ेंगे तो राजनीति से लेकर, धर्मनीति से लेकर सब में हम ऐसे व्यक्तियों को पहुँचा देंगे, जो कमाल के हो जाएँगे।

हमारा यही प्रयास रहता है कि हर व्यक्ति के अंदर कमियाँ तो हैं, लेकिन अच्छाइयाँ भी बहुत कुछ हैं। अच्छाइयाँ इतनी हैं कि बुराई दबती हुई चली जाती है। उन अच्छाइयों को और आगे उभारना चाहिए। कमियों को कम करो, अच्छाइयों को ज्यादा पैदा करो। अच्छाइयाँ आपकी पैदा होती चली जाएँगी, तो बुराइयाँ स्वतः ही चली जाएँगी।

बेटे! आपके पड़ोस में और समाज में जहाँ कहीं भी अवाँछनीयताएँ पाई जाएँ, उनके विरुद्ध आपको आगे आना पड़ेगा। तो क्या करेंगे, फिर लड़ाई-झगड़ा करेंगे? नहीं, बेटे लड़ाई-झगड़ा करने की कोई जरूरत नहीं है। काहे की जरूरत है? विचारों को विचारों से काटिए, सिद्धांतों को सिद्धांतों से काटिए। उनकी ठोड़ी में हाथ डालिए, उनकी मिन्नतें करिए और जब वो नहीं मानें, तो तन करके भी खड़े हो जाइए। अच्छा, तो वह यह माँगता है? अच्छा, हमारा भाई ही क्यों न हो? हम इसके यहाँ नहीं जाएँगे।

हमारा पिता है, तो हमें इस पिता की बात नहीं माननी है, किसी की भी नहीं माननी है। हमें अपनी ही जीवात्मा की माननी है कि क्या सही है, क्या उचित है, क्या अनुचित है? मीरा जब कृष्ण से जुड़ गई, तो उसको एक ही धुन सवार थी। क्या था कि मैं अपने आराध्य का कैसे गुणगान करूँ और कैसे मैं घर-घर उस आवाज को पहुँचाऊँ कि कृष्ण बड़ा शक्तिशाली है।

उसके घरवाले आड़े आए और उन्होंने उसका विरोध किया। विरोध ही नहीं किया; बल्कि जहर का प्याला भी दिया, पर वो जहर उसके लिए अमृत बन गया। कहा कि जहर से क्या डरना है, जहर भी कोई चीज होती है? देखा जाएगा, अपने अंदर ताकत है, तो हम जहर को भी अमृत बना सकते हैं।

आपने शंकर जी की मूर्ति देखी है न? शंकर जी के दाएँ-बाएँ सब जगह सर्प, बिच्छू लिपटे हुए हैं। अगर आप ये समझते हैं कि शंकर जी कैसे हैं?

उनके गले में साँप, सर पर साँप, हाथ में साँप, तो फिर आपके सामने कोई भी समस्या उत्पन्न नहीं होगी। उन्होंने सर्पों को भी छाती से लगाया और जहर को भी अपने गले में उतारा था और अमृत? अमृत सबको बाँट दिया।

फूलों की तरह बनिए

आप उनका कार्य करिए, शंकर जी जैसा कार्य करिए। आपने फूलों को देखा है न? फूल जब भगवान के चरणों पर चढ़ता है, तो डाली से टूटता है और जब कोई तोड़ता है, मना नहीं

करता। अच्छे कार्य के लिए कभी मना नहीं किया जा सकता और जब उसको इतने पर भी संतोष नहीं होता कि भगवान के चरणों पर तो आ गया, मैं तो भगवान के गले से लगना चाहता हूँ।

तो बेटे! वही फूल सूई को समर्पित हो जाता है और सूई छीलती हुई चली जाती है, धागा पिरोता हुआ चला जाता है और माला बन जाती है। किसकी? भगवान के गले की माला बनी है। यदि आपको राष्ट्रदेवता की माला बनना है और समाज का उत्थान करना है, तो आपको फूलों के तरीके से जैसे उन्होंने कष्ट सहा है, तो आपको भी कष्ट सहना पड़ेगा और सहना भी चाहिए।

बेटे! जहाँ कहीं भी आप दुराचार देखें। जहाँ कहीं भी आपको कमियाँ नजर आएँ, उनको प्यार से, दुलार से आप समझाइए। समझ में आ जाएगा? बिलकुल आ जाएगा। कहते हैं—नहीं साहब! हम तो इतनों के पास जाते हैं और कोई मानता ही नहीं है। अच्छा नहीं मानता, तो रहने दे। मैंने उस दिन एक उदाहरण बताया था कि भगवान बुद्ध के समय में एक महिला आई और उस महिला ने यह कहा कि भगवान मैं क्या करूँ? मेरा बच्चा गुड़ खाने से बाज नहीं आता।

उन्होंने कहा कि बेटी! अभी तो नहीं एक सप्ताह बाद आना, तब मैं आपको बताऊँगा कि गुड़ खाना चाहिए कि नहीं खाना चाहिए? अभी तो मैं बताने की स्थिति में नहीं हूँ। जब एक सप्ताह बाद वह महिला आई, तो उसने कहा कि बच्चे पर यह क्या जादू हो गया? इसने तो गुड़ बिलकुल छोड़ दिया, एक सप्ताह से नहीं माँगा। उन्होंने कहा कि बेटी! इतने दिनों में मैंने जिह्वा पर कंट्रोल किया है और मैंने नहीं खाया। मैंने यह दिखाया कि बगैर उसके मैं रह सकता हूँ कि नहीं रह सकता तो मेरी अंतरात्मा की आवाज समझिए, आशीर्वाद समझिए, पुकार समझिए, वो सुन लिया है।

ऐसा जरूर होता है, इसमें कोई दो राय नहीं है। अनुदान और वरदान भी मिलते हैं, भगवान के मिलते हैं और सारे मानव जाति का भी मिलता है। भगवान का मिलता है कि नहीं मिलता, हमें नहीं मालूम, लेकिन इस भगवान का जरूर मिलता है, ये जो बैठे हैं। ये भगवान का स्वरूप हैं। इनकी सेवा में इतना आनंद आना चाहिए, जितना गायत्री माता की आराधना-उपासना में आता है, वही

ज्ञान और विचार पुरुष हैं, इनकी पहुँच दरवाजे तक है। भक्ति स्त्री है—वह घर के भीतर भी चली जाती है। भगवान केवल भक्ति से ही मिलते हैं। उनके लिए आकुल होकर, उन्हें पुकारने से—वे दौड़े चले आते हैं।

—स्वामी रामकृष्ण परमहंस

आपको इसमें आना चाहिए। तभी आपकी उपासना संपूर्ण है।

संपूर्ण उपासना में जितना लाभ है, उतना एकांगी में नहीं है। एकांगी में स्वर्ग, मुक्ति पा लीजिए, फिर क्या होगा? दूसरे तुम्हारे भाई-बंधु नरक की अग्नि में जलते रहें। हम स्वर्ग-मुक्ति पाएँगे? नहीं, हमको नहीं चाहिए स्वर्ग-मुक्ति। जब तक हमारा एक भी प्राणी नरक में रहता है, तब तक हमें स्वर्ग की अपेक्षा क्यों रहेगी? हमको स्वर्ग की अपेक्षा नहीं रहेगी, हम नरक में ही रहेंगे।

[क्रमशः अगले अंक में समापन]

प्रभावशाली जीवन के स्वर्णिम सूत्र

सफलता हर व्यक्ति का जन्मसिद्ध अधिकार है, लेकिन चाहते हुए भी अधिकांश एक सफल जीवन नहीं जी पाते, जिसमें बाहरी उपलब्धियों के साथ जीवन में सार्थकता का बोध भी हो। इसी विषय पर अमेरिकी लेखक स्टीफन कॉवे की पुस्तक सेवेन हेबिट्स ऑफ हाईली इफेक्टिव पीपल, प्रखर मार्गदर्शन करती है।

व्यक्तिगत, सामाजिक तथा पेशेवर जीवन में सफलता को सुनिश्चित करने वाली इस पुस्तक में सात आदतों की चर्चा की गई है, जो हर प्रभावशाली व्यक्ति में पाई जाती हैं। पुस्तक में पूर्वी एवं पश्चिमी चिंतन के ज्ञान-सार को समेटते हुए लेखक ने अपने सफल व्यावसायिक जीवन के अनुभवों को साथ जोड़कर प्रस्तुत किया है। प्रस्तुत है पुस्तक में वर्णित सात स्वर्णिम सूत्रों का सार-संक्षेप।

पहले चरण की आदत है, बी प्रोएक्टिव अर्थात अपने कर्मों की जिम्मेदारी लें और अपने समय व ऊर्जा को उन क्षेत्रों में केंद्रित करें, जो आपके प्रभावक्षेत्र में आती हों।

भविष्य में जो चुनौतियाँ आ सकती हैं, जिन समस्याओं का सामना करना पड़ सकता है, जिस तरह का उज्ज्वल भविष्य आप देखना चाहते हैं, इनके अनुरूप वर्तमान रणनीति पर विचार प्रोएक्टिव होने की आदत में शामिल है, जिससे कि हम वर्तमान कर्मों को ऐसा स्वरूप देते हैं कि भविष्य की चुनौतियों का सामना करने के लिए पूर्व से ही तैयार होते हैं, जिससे भविष्य में इच्छानुकूल अपेक्षित परिणाम आ सकें।

एक प्रोएक्टिव व्यक्ति बनने के लिए आवश्यक हो जाता है कि हम अपने व्यक्तित्व व जीवन के हर आयाम से अधिकाधिक परिचित हों तथा उन चीजों के प्रति जागरूक हों, जिन्हें हम अपनी क्रियाओं द्वारा प्रभावित कर सकते हैं, बदल सकते हैं, न कि उन चीजों पर, जो हमारे प्रभावक्षेत्र से बाहर हैं व जिन्हें हम बदल नहीं सकते।

दूसरा चरण है, बिगिन विद दि एंड इन माइंड अर्थात अपनी रुचि, क्षमता, संभावना तथा यथास्थिति को देखते हुए अपने लक्ष्य का निर्धारण करना। यह अपने जीवनलक्ष्य से जुड़ी आदत है। हमारा जीवनलक्ष्य कितना स्पष्ट है, एक मिशन स्टेटमेंट के रूप में क्या यह परिभाषित है, जिसमें आपका जीवन-दृष्टिकोण परिलक्षित होता हो।

यह मायने रखता है और एक प्रभावशाली जीवन का निर्णायक तत्त्व रहता है। लक्ष्य स्पष्ट न होने पर जीवन के प्रति रवैया भी ढुलमुल रहता है, व्यक्ति के प्रयास आधे-अधूरे व शिथिल रहते हैं तथा जीवन में कहने योग्य सफलता अर्जित नहीं हो पाती, क्योंकि जीवन की शक्तियाँ इधर-उधर बिखरी रहती हैं।

इसी आधार पर आप अपने जीवन की नैया के खेवनहार की भूमिका में आ जाते हैं, अपने जीवन की पटकथा के लेखक की भूमिका में स्वयं को खड़ा पाते हैं। आप अपने भाग्य-विधाता स्वयं बनते हैं।

प्रोएक्टिव माइंडसेट या मन:स्थिति के साथ यह जीवन-बोध मिलकर सुनिश्चित करते हैं कि आप जो भी निर्णय लेंगे, वे आपके अपने जीवन-

ध्येय के साथ मेल खा रहे हैं, जैसा कि आप बनना चाहते हैं और आप अपने जीवन के लिए स्वयं पूरी तरह से जिम्मेदार रहते हैं।

तीसरे चरण की आदत है, पुट फर्स्ट थिंग फर्स्ट, अर्थात यह समय प्रबंधन से जुड़ा पहलू है। यहाँ निर्धारित लक्ष्य के अनुरूप अपनी प्राथमिकताओं को परिभाषित करना होता है। इस चरण में अपने विजन को वास्तविकता में रूपांतरित किया जाता है और इसके अनुरूप उचित निर्णय लिए जाते हैं।

इसके लिए अपने जीवन में महत्त्वपूर्ण, गैर-महत्त्वपूर्ण तथा आवश्यक व गैर आवश्यक कारकों की पहचान आवश्यक हो जाती है, साथ ही तात्कालिक चीजों को कैसे निपटाया जाना है, इसका त्वरित निर्णय लेना पड़ता है अर्थात जीवन के हर पल का श्रेष्ठतम उपयोग कैसे हो, यह इसके अंतर्गत आता है और यह लक्ष्य की स्पष्टता के अनुरूप तय होता है। यदि लक्ष्य स्पष्ट व जीवंत नहीं है, तो गैर महत्त्वपूर्ण एवं अनावश्यक कार्यों में व्यक्ति का उलझना तय हो जाता है।

चौथे चरण की आदत है, थिंक विन-विन। यह सोचने का स्वस्थ व संतुलित तरीका है, जो सकारात्मक व सृजनात्मक सोच को परिलक्षित करता है। पिछले तीन चरणों के आधार पर व्यक्ति में वह विश्वास व साहस आ जाता है कि वह थिंक विन-विन की मन:स्थिति को धारण कर सके।

इसके आधार पर ही सुनिश्चित होता है कि जब हम साथ में कार्य कर रहे होते हैं, तो आपसी आदान-प्रदान के आधार पर हम आगे बढ़ते हैं, विकसित होते हैं तथा परस्पर लाभान्वित होते हैं। यह मिल-जुलकर टीमवर्क के रूप में कार्य को संभव बनाता है तथा थिंक विन-लूज या लूज-विन की नकारात्मक स्थिति व इसके दुष्परिणामों से बचाता है।

पाँचवें चरण की आदत है, सीक फर्स्ट टू अंडरस्टेंड, देन टू बी अंडरस्टुड—यह हमारे वाणी-व्यवहार से जुड़ा भावनात्मक पहलू है। इसके अंतर्गत किसी व्यक्ति को उसके बौद्धिक एवं भावनात्मक स्तर पर जानने के लिए हम संवेदी श्रवण का सहारा लेते हैं।

इसे स्टीफन कॉवे एम्पैथिक लिस्निंग कहते हैं, जो सर्वोच्च स्तर का श्रवण कौशल है, जो जिम्मेदारी तथा संवेदनशीलता के भाव को विकसित करता है। इसी आधार पर आवश्यकता पड़ने पर ईमानदार एवं स्टिक परामर्श देना संभव होता है। स्टीफन कॉवे के अनुसार, इसका अभ्यास व्यक्ति के इमोशनल बैंक एकाउंट को समृद्ध करता है, जिसके आधार पर व्यक्ति अधिक भावप्रवण बनता है और उसके व्यक्तित्व की विश्वसनीयता एवं प्रामाणिकता में इजाफा होता है, जो सामूहिक एवं सामाजिक स्तर पर सफल जीवन का एक निर्णायक आधार रहता है।

छठे चरण की आदत है, साइनर्जायज की, जिसके अंतर्गत भिन्न-भिन्न पृष्ठभूमि, सोच-विचार और क्षमता के लोगों के बीच उनकी क्षमताओं का नियोजन किया जाता है, जिससे कि श्रेष्ठतम परिणाम आ सकें। इसके माध्यम से वे चीजें उभरती हैं, जो अन्यथा अकेले कार्य करने पर संभव नहीं होतीं। यह एक प्रभावी टीमवर्क को सुनिश्चित करता है।

सातवें चरण की आदत है, शार्पन दि सॉ की, जिसके अंतर्गत आत्मनिरीक्षण, सुधार व नवीनीकरण के लिए समय निकालना पड़ता है, जिससे कि जीवन के हर क्षेत्र में एक संतुलन सधे और मिलकर एक प्रभाव उत्पन्न करे। यहाँ आरे को एक उपमा के रूप में उपयुक्त किया गया है।

जिस तरह आरे के दाँतों को धार देने पर उससे वृक्ष या लकड़ी को चीरना सरल हो जाता है, वैसे ही जीवन के विभिन्न पहलुओं को नियमित रूप से तराशने से उनकी प्रखरता बनी रहती हैं व इनका नियोजन एक सफल एवं प्रभावी जीवन को संभव बनाता है।

इसके अंतर्गत स्टीफन कॉवे जीवन के चार पक्षों पर नियमित रूप से कार्य करने की बात करते हैं। शारीरिक, भावनात्मक-सामाजिक, मानसिक एवं आध्यात्मिक। उपयुक्त आहार, व्यायाम, विश्राम-नींद आदि के साथ शारीरिक पक्ष को सबल एवं स्वस्थ रखा जा सकता है।

संवेदी श्रवण, अर्थपूर्ण संवाद एवं कर्त्तव्यप्रधान सेवा के साथ रिश्ते भावपूर्ण रहते हैं। नित्य अध्ययन व ज्ञानवर्द्धन के साथ बौद्धिक विकास सुनिश्चित होता है तथा नित्य ध्यान, प्रार्थना व स्वाध्याय जैसे उपक्रम आध्यात्मिक रूप से व्यक्ति को जीवंत रखते हैं। प्रकृति के मध्य विचरण इन सभी पक्षों को पुष्ट करता है। सातवीं आदत पिछली छह आदतों को पुष्ट करती है, जीवन में एक संतुलन बिठाती है और व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाती है तथा एक सफल-सार्थक जीवन को सुनिश्चित करती है। ❑

संत एकनाथ के विषय में प्रसिद्ध था कि उनकी सहनशीलता अपूर्व है। एक बार उनकी परीक्षा लेने के इरादे से एक व्यक्ति उस पेड़ पर चढ़ गया, जिसके नीचे से संत एकनाथ प्रतिदिन नदी स्नान को निकलते थे। उस दिन जैसे ही वे नदी स्नान से लौटकर घर वापस जाने लगे, उस दुष्ट व्यक्ति ने संत पर कुल्ला कर दिया। एकनाथ कुछ बोले नहीं और वापस जाकर नदी स्नान कर आए। दोबारा लौटने लगे तो उस व्यक्ति ने उन पर फिर से कुल्ला कर दिया। इस बार भी संत एकनाथ बिना कुछ बोले वापस नदी को लौटे और स्नान करके वापस आ गए। उस व्यक्ति ने इस बार भी उन पर कुल्ला कर दिया और यह प्रक्रिया 108 बार चली।

इतनी बार कुल्ला करने पर वह व्यक्ति जरूर थक गया, पर संत एकनाथ बिना विचलित हुए नदी स्नान करके वापस लौटते रहे। आखिरकार वह व्यक्ति शर्मिंदा होकर उनके चरणों में गिर पड़ा और उनसे बोला—"भगवन्! मुझे क्षमा करें। मैं घोर पातकी हूँ। मैंने आपको अन्यथा कष्ट दिया।"

संत एकनाथ पूर्ण धैर्य के साथ बोले—"नहीं पुत्र! मैं तो तुम्हें धन्यवाद दूँगा। तुम्हारे कारण आज मुझे नदी में 108 बार स्नान करने का अवसर मिला। ऐसा सौभाग्य कहाँ रोज-रोज मिलता है।" संत के कथन से वह दुष्ट व्यक्ति पानी-पानी हो गया।

विश्वविद्यालय परिसर से —223

गीता में योग-साधना

विश्वविद्यालय परिसर में इस बार के शारदीय नवरात्र के अवसर पर परम श्रद्धेय कुलाधिपति डॉ० प्रणव पण्ड्या जी ने 'श्रीमद्भगवद्गीता में योग-साधना' पर अपना उद्बोधन दिया और इस हेतु छठवें अध्याय के 10 वें श्लोक से लेकर 18वें श्लोक में निहित योग-साधना के गूढ़ार्थ तत्त्व विवेचन को समझाया।

श्रीमद्भगवद्गीता के इन नौ श्लोकों में निहित योगतत्त्व किस तरह से काव्य के नौ रसों से संबंधित हैं, उसका भी गहन व रसपूर्ण विवेचन इसमें किया गया। नवरात्र के इन नौ दिनों की विचारपूर्ण विवेचना का सार-संक्षेप इस प्रकार है—

(1) **प्रथम दिन** का विषय—**योग-साधना की तैयारी।** योग-साधना के द्वारा गुरु, शिष्य को ब्रह्मविद्या की अनुभूति प्रदान करता है। यहाँ भगवान श्रीकृष्ण योगेश्वर हैं, योग के मार्गदर्शक हैं, जगद्गुरु हैं, अर्जुन उनसे ज्ञान प्राप्त करने वाला उनका शिष्य है और भगवद्गीता स्वयं योगशास्त्र है।

योग-साधना की तैयारी का संबंध—योग में शृंगार रस से है। शृंगार रस कैसा होता है ? शृंगार रस में होता है—मिलन की उत्कंठा। जब हम अपने प्रियजन से मिलते हैं, तो मिलन की उत्कंठा और मिलन में जो मन में हिलोरें और हलचलें होती हैं, उनकी व्याख्या जब कवि करता है, तब शृंगार रस कहलाता है।

योग-साधना में भी कुछ ऐसा ही है, हम जिससे मिलने वाले हैं, वो हमारे परम प्रियतम परमेश्वर हैं, भगवान हैं और अपने चित्त की कालिख के कारण, मलों के कारण, भुलावे के कारण, भटकावे के कारण ये वियोग बड़ा लंबा हो गया है, बड़ा पुराना हो गया है, इस बीच हमने भी बड़ी तकलीफ पाई और शायद उन्हें भी हमारी याद आई होगी। तो योग-साधना के लिए योग-साधना की तैयारी करनी पड़ती है।

योग-साधना सब नहीं कर पाते, जो इस मिलन की तैयारी करते हैं, वही इस योग-साधना के मार्ग पर आगे बढ़ पाते हैं। यह तैयारी कैसी होनी चाहिए ? इसके बारे में भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं—

योगी युञ्जीत सततमात्मानं रहसि स्थितः।
एकाकी यतचित्तात्मा निराशीरपरिग्रहः॥

अर्थात मन और इंद्रियोंसहित शरीर को वश में रखने वाला, आशारहित और संग्रहरहित योगी अकेला ही एकांत स्थान में स्थित होकर आत्मा को निरंतर परमात्मा में लगावे और इसके लिए हम एकाकी रहने का अभ्यास करें।

जब हम एकाकीपन का अनुभव करते हैं, जब हम एकाकी होने का प्रयास करते हैं, तो हम अंदर की भीड़ भगाते हैं। इस बात को कम लोग समझते हैं कि यथार्थ भीड़, यथार्थ हल्ला-गुल्ला, यथार्थ शोरगुल अंदर हो रहा है, लेकिन एकाकीपन में हम अकेले हो जाते हैं। फिर मन में निर्वात होता है, निष्कंप होता है, जिसमें मन में कोई हलचल नहीं होती। योगी इस एकाकीपन की अनुभूति करता है और साधना का आरंभ यहीं से होता है।

(2) **द्वितीय दिन—पवित्र स्थान एवं आसन।** योग-साधना के आसन पर स्थिर होने के लिए साधक में आवश्यक है—वीर रस का भाव। क्योंकि मन की इच्छाएँ, कल्पनाएँ, वासनाएँ, आदि मन को स्थिर नहीं होने देतीं, इसलिए आसन पर स्थिर होने के लिए मन में दृढ़ता के साथ वीरता का भाव जरूरी है, ताकि मन को कोई डिगा न सके।

योग-साधना के लिए पवित्रस्थान व आसन कैसा हो?

इसके लिए भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं—

शुचौ देशे प्रतिष्ठाप्य स्थिरमासनमात्मनः।
नात्युच्छ्रितं नातिनीचं चैलाजिनकुशोत्तरम्॥

शुद्ध भूमि में, जिसके ऊपर क्रमशः कुशा, मृगछाला और वस्त्र बिछे हैं, जो न बहुत ऊँचा है और न बहुत नीचा; ऐसे अपने आसन को स्थिर स्थापन करके उसमें बैठें।

जब भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं—**शुचौ देशे,** तो इसका सरल अर्थ है—शुद्ध भूमि, शुद्ध स्थान। शुद्ध स्थान, इसका मतलब यह भी है—अप्रभावित स्थान। यानी जो जीवन की निम्नतर वासनाएँ हैं, उनसे बिलकुल अप्रभावित स्थान और इस तरह के अप्रभावित स्थान का योग-साधना में गहरा परिणाम है।

पवित्र स्थान जैसे—गोशाला, शिवालय, देवमंदिर, गंगा-यमुना आदि पवित्र नदियों का किनारा, विंध्य-हिमालय-सुमेरु, कामदगिरि-गोवर्धन आदि दिव्य पर्वत, योगमठ, सिद्धपीठ, किसी योगी की तपस्थली, वट-पीपल-गूलर-आम-बिल्व आदि पवित्र वृक्ष, इसके अलावा घर में भी कोई-न-कोई ऐसा कोना होना चाहिए, जिसे हम पवित्र कह सकें, जो पूजास्थली के योग्य हो।

ऐसे पवित्रस्थल में ध्यान के लिए हमने जो आसन बिछाया, उसमें पहले क्रम में हमने बिछाया कुश, फिर बिछाया मृगचर्म और इसके बाद हमने बिछाया कपड़ा, ये एक के ऊपर एक बिछाया, फिर हम उस पर स्थिर होकर बैठ गए, ये कुश, मृगछाला और रेशमी वस्त्र क्या हैं? ये विद्युतरोधी हैं, अतः इसके कारण ध्यान में हमें जो विद्युत-ऊर्जा प्राप्त होती है, यह संरक्षित रहती है, भूमि में नहीं उतरती है।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि ध्यान करने के लिए पवित्रस्थल का चयन हो, यह योग-साधना की, ध्यान-साधना की पहली आवश्यकता है।

अगर ऐसा पवित्रस्थल मिल जाए, तो वहाँ पर आसन लगाकर स्वयं को स्थिरतापूर्वक बैठाएँ और जहाँ पर हम बैठें, वह समतल भूमि हो, न तो वह स्थल धरती की समतलता से बहुत नीचे हो और न ही बहुत ऊँचाई पर हो, क्योंकि भूमि से निचली सतहों पर निम्नतर तरंगें प्रवाहित होती हैं और भूमि से ऊँचाई के स्तर में श्रेष्ठतम तरंगें प्रभावित होती हैं, लेकिन इन दोनों ही तरह की तरंगों को सहन करने की क्षमता योग-साधना का आरंभ करने वाले साधक में नहीं होती, इसलिए भगवान श्रीकृष्ण पवित्र भूमि की सामान्य समतल सतह पर आसन लगाकर योग-साधना का प्रारंभ करने के लिए कहते हैं।

(3) तृतीय दिन—तन की स्थिरता-मन की एकाग्रता। यह इतना आसान नहीं है, अतः इसके लिए साधक में रौद्र रस का संचार चाहिए, ताकि तन की स्थिरता व मन की एकाग्रता में बाधा डालने वाले तत्त्वों से अबाधित रहे।

अब भगवान श्रीकृष्ण योग-साधना के अगले सूत्र में कहते हैं—

तत्रैकाग्रं मनः कृत्वा यतचित्तेंद्रियक्रियः।
उपविश्यासने युञ्ज्याद्योगमात्मविशुद्धये॥

उस आसन पर बैठकर चित्त और इंद्रियों की क्रियाओं को वश में रखते हुए मन को एकाग्र करके अंतःकरण की शुद्धि के लिए योग का अभ्यास करें।

भारतीय दर्शन की एक शाखा 'योग' ने ऐसे आसन खोजे हैं, जो मानवीय इंद्रियों को अंतर्मुखी करने में अद्भुत रूप से सहयोगी होते हैं और इस तरह की मुद्राएँ खोजी हैं, जो मानवीय इंद्रियों को अंतर्मुखी करने में सहयोगी होती हैं। बैठने के ऐसे ढंग खोजे हैं, जो मनुष्य शरीर के विशेष केंद्रों पर दबाव डालते हैं और उस दबाव का परिणाम विशेष इंद्रियों को शिथिल करना और उनको नियंत्रित करना होता है।

हमारा चित्त कर्म के भार से लदा हुआ है, संस्कारों के भार से बोझिल है। संस्कारों से बोझिल

चित्त, कर्मों से बोझिल चित्त—स्थिर नहीं होता है, अस्थिर रहता है। भगवान इसीलिए कहते हैं कि पहले जरा तैयारी कर लो। ध्यान की तैयारी उतनी ही नहीं है कि आसन बिछा लिया, अच्छी जगह आप बैठ गए तो ध्यान लग गया।

इतने से ही काम नहीं चलेगा, ध्यान की तैयारी के लिए भगवान कहते हैं कि जब आपने मार्ग चयन किया है तो लक्ष्य भी आपको पता होना चाहिए। **आत्मविशुद्धये**—ये गंतव्य है, लक्ष्य है। आप आसन पर बैठ करके ध्यान क्यों कर रहे हैं ? ध्यान कर रहे हैं आत्मशुद्धि के लिए। आत्मपरिष्कार ही योग-साधना का उद्देश्य है।

ऋषियों में और राक्षसों में क्या फरक होता है ? तपस्या दोनों ही बड़ी विकट करते हैं। लेकिन एक का उद्देश्य—आत्मशुद्धि व परिष्कार होता है और दूसरे का उद्देश्य—शक्ति, सिद्धि व संसार के भौतिक सुखों को प्राप्त करना होता है। भगवान कहते हैं—विवेक उनके पास है, जो योग-साधना शुद्धि के लिए करते हैं।

योगसिद्ध होने का मतलब है कि चित्त इतना निर्मल है, इतना निर्भार है कि बैठते ही ध्यान लग जाए। ध्यान शुद्ध मन की स्वाभाविक क्रिया है। मन शुद्ध होगा तो ध्यान लग जाएगा। मन अशुद्ध होगा तो ध्यान नहीं लगेगा।

(4) चतुर्थ दिवस—मन के वन में स्थिरता। मन का यह वन बड़ा भयानक है। इसमें एकाग्रता स्थिरता दोनों के ही टूटने-बिखरने की उम्मीदें ज्यादा हैं। चित्त की चेतना की नई-नई परतों के इस उभरते क्रम में नवीन व भयानक विघ्न उठ खड़े होते हैं। योगसाधक का तप और भगवान की कृपा तथा सद्गुरु का आशीष ही इस पथ का संबल है।

अत: इस अवस्था में साधक को भयानक रस की अनुभूति होती है और इस अवस्था में भगवान श्रीकृष्ण योग-साधना का यह सूत्र कहते हैं—

समं कायशिरोग्रीवं धारयन्नचलं स्थिरः।
संप्रेक्ष्य नासिकाग्रं स्वं दिशश्चानवलोकयन्॥

अर्थात काया, सिर और गले को सीधे, अचल, धारण करके तथा दिशाओं को न देखकर केवल अपनी नासिका के अग्रभाग को देखते हुए स्थिर होकर बैठे।

भगवान श्रीकृष्ण के अनुसार—ध्यानयोग-साधना के लिए क्रमानुसार विधि इस प्रकार है—एक तो शरीर बिलकुल सीधा हो, वह जमीन से नब्बे डिगरी का कोण बनाए। जब साधक की रीढ़ जमीन से नब्बे डिगरी का कोण बनाती है, तो वह साधक करीब-करीब पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के बाहर हो जाता है और पृथ्वी के गुरुत्वाकर्षण के बाहर हो जाना ऊर्ध्वगमन के लिए एक मार्ग बन जाता है।

दूसरी बात, योग-साधना की इस विधि में दृष्टि नासाग्र हो, ऐसा होने पर स्वत: ही पलकें झुक जाएँगी, अगर नासाग्र दृष्टि करनी है, तो पूरी आँख खोले रखने की जरूरत भी न रह जाएगी। यह जो आधी खुली आँख है, उसका बड़ा राज है। भीतर आधी खुली आँख से सपने पैदा करना मुश्किल है और बाहर की दुनिया को यथार्थ मानना मुश्किल है। जैसे कोई अपने मकान की देहलीज पर खड़ा हो गया; न अभी भीतर गया, न अभी बाहर गया, बीच में ठहर गया।

जब दृष्टि नासाग्र होती है, तो आपको एक और अद्भुत अनुभव होगा, इसमें आपको आज्ञाचक्र पर जोर पड़ता हुआ मालूम पड़ेगा। दोनों आँखों के मध्य बिंदु पर आपको जोर पड़ता हुआ मालूम पड़ेगा। यह जोर बड़ा महत्त्वपूर्ण है। क्योंकि यहीं वह द्वार है, जो खुले तो ऊर्ध्वगमन शुरू होता है।

(5) पंचम दिवस—प्रशांतावस्था में अद्भुत अनुभूतियाँ। इस क्रम के आरंभ के पूर्व मन के वन की भयावहता विलीन हो जाती है। अब तो बस साधक में अद्भुत रस का संचार होने लगता है। अद्भुत रस की इन अनुभूतियों के साथ योगसाधक में प्रशांतावस्था स्थिर होने लगती है।

इस अवस्था में भगवान श्रीकृष्ण योग-साधना का अगला सूत्र कहते हैं—

प्रशान्तात्मा विगतभीर्ब्रह्मचारिव्रते स्थितः।
मनः संयम्य मच्चित्तो युक्त आसीत मत्परः॥

जिसका अंतःकरण शांत है, जो भयरहित है और जो ब्रह्मचारिव्रत में स्थित है, ऐसा सावधान ध्यानयोगी मन का संयम करके, मेरे में चित्त लगाता हुआ, मेरे परायण होकर बैठे।

ध्यान के जो अनुभव होते हैं और विशेष तौर पर उनके लिए, जो ईश्वरप्राप्ति के मार्ग पर हैं, जो आत्मजागरण और आत्मकल्याण या आत्मसाक्षात्कार के मार्ग पर हैं, उनमें एकाग्रता और स्थिरता के साथ प्रशांत की गहराई में उतरने पर होने वाले अनुभव कभी-कभी बड़े दुर्गम, बड़े भयावह होते हैं। क्यों? महर्षि पतंजलि कहते हैं **निरतिशयः चित्तः**, ध्यान से चित्त खाली होता है, निर्भार होता है।

चित्त की जो परतें हैं जिनमें संस्कार है, जिनमें कर्मराशि है, कर्मबीज है, वो बड़ी कठिन होती है। इसीलिए भगवान पिछले सूत्र में कहते हैं कि **यतचित्तेन्द्रियक्रियः**—अर्थात चित्त, इंद्रिय और क्रिया को यत्नपूर्वक संयम करने वाला, यत्नपूर्वक वश में करने वाला। यति का मतलब क्या होता है, जिसको कि मन का वशीकरण मालूम है।

तंत्र में एक प्रक्रिया होती है वशीकरण। वशीकरण में हम क्या करते हैं, दूसरों का वशीकरण करते हैं। यहाँ पतंजलि कहते हैं कि **मनवशीकार संज्ञा**—अर्थात अपने मन को वश में करने वाला, क्योंकि ऐसा व्यक्ति ही योग-साधना के पथ पर अग्रसर हो सकता है। यहाँ पर योग-साधना की तीन शर्तें हैं—(1) योगसाधक का अंतःकरण शांत हो, (2) वह भयरहित हो, और (3) वह ब्रह्मचर्यव्रत में स्थित हो, ऐसा होने पर ही वह मन पर संयम करके योग-साधना कर सकता है।

(6) षष्ठ दिवस—मनोलय की अवस्था। योग-साधना में साधक के 'मन की लय व लीनता की साधना' के अगले क्रम में अब साधक का प्रवेश होता है। इस क्रम में प्रवेश के पूर्व देह की स्थिति व जीवन के परिदृश्य के प्रति वैराग्य भी बढ़ता है। यह अवस्था सावधानी की है। सावधानी यह कि देह में आस-पास के परिदृश्य में न तो आसक्ति होने पाए और न इसकी उपेक्षा।

इसके लिए चित्त की मलिनता स्वच्छ करने के साथ देह की मलिनता भी स्वच्छ करनी चाहिए। इसके लिए कतिपय हठयोग की क्रियाएँ हैं। इन क्रियाओं को विचारपूर्वक करने से योगसाधक के मन में वीभत्स रस का संचार होता है। इस अवस्था में भगवान श्रीकृष्ण योग-साधना का अगला सूत्र कहते हैं—

युञ्जन्नेवं सदात्मानं योगी नियतमानसः।
शान्तिं निर्वाणपरमां मत्संस्थामधिगच्छति॥

इस प्रकार वश में किए हुए मन वाला योगी अपनी आत्मा को निरंतर परमात्मा में लगाता हुआ मुझमें रहने वाली परमानंद की पराकाष्ठारूप शांति को प्राप्त होता है।

निरंतर परमात्मा में चेतना को लगाता हुआ योगी! यहाँ निरंतर का अर्थ है—एक भी क्षण विस्मरण न हो, हर पल, हर क्षण परमेश्वर का स्मरण बना रहे। जागते ही नहीं, निद्रा में भी भीतर एक अंतर-धारा प्रभु की ओर सतत बहती ही रहे, जरा भी इसमें व्यवधान न हो तो यह निरंतर ध्यान हुआ, निरंतर स्मरण हुआ।

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि ऐसा निरंतर प्रभु के ध्यान में लगा हुआ व्यक्ति ही पराकाष्ठा रूप शांति को प्राप्त होता है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि शेष सब जन निराश हो जाएँ कि भगवान के लिए पुकार एक क्षण भी नहीं हो पाती है, तो निरंतर कैसे हो पाएगी?

इस तरह जो भी निरंतर के इस अर्थ को समझेंगे, प्राथमिक रूप से उन्हें निराशा अनुभव होगी कि फिर हमारे लिए कोई द्वार नहीं, मार्ग नहीं,

लेकिन निराश होने का कोई भी कारण नहीं है। इससे केवल इतना ही सिद्ध होता है कि हमें स्मरण की प्रक्रिया ही ज्ञात नहीं है। क्योंकि हमारे हाथ में एक क्षण से ज्यादा कभी भी होता नहीं। कोई उपाय नहीं कि दो क्षण हमारे हाथ में एक साथ हो जाएँ।

इसलिए अगर एक क्षण में भी प्रभु-स्मरण की प्रक्रिया में प्रवेश हो जाए, तो निरंतर में प्रवेश होने में कोई भी बाधा नहीं है। क्योंकि एक क्षण में जो प्रवेश को जान गया, वह हर क्षण में उस प्रवेश को उपलब्ध हो सकेगा। इसलिए बहुत अड़चन नहीं है। बस, उस एक क्षण में प्रवेश की कुंजी हमारे पास नहीं है, यही अड़चन है।

(7) सप्तम् दिवस—योगमय जीवन। योग-साधना की मनोलय अवस्था प्राप्त होने पर योगसाधक में करुण रस का संचार होता है। फिर उसमें अपने-पराए के भेद समाप्त हो जाते हैं। उसमें सभी जीवों के लिए, सभी प्राणियों के लिए करुणा जाग्रत हो जाती है। उसमें सर्वत्र अपनत्व की अनुभूति समा जाती है।

इस अवस्था में भगवान श्रीकृष्ण योग-साधना का अगला सूत्र कहते हैं—

नात्यश्नतस्तु योगोऽस्ति न चैकान्तमनश्नतः।
न चाति स्वप्नशीलस्य जाग्रतो नैव चार्जुन॥

हे अर्जुन, यह योग न तो बहुत खाने वाले का, न बिलकुल न खाने वाले का, न अति शयन करने के स्वभाव वाले का और न सदा जागने वाले का ही सिद्ध होता है। यहाँ भगवान भोजन और शयन में संतुलन की बात करते हैं। भोजन और शयन—हमारे जीवन को संतुलित और असंतुलित करते हैं।

भोजन और शयन का हमारे जीवनक्रम में हमारी जीवनचर्या से बहुत गहरा संबंध है। हमारी दिनचर्या और हमारी रात्रिचर्या ये बताती है कि हमारी योगचर्या होगी या नहीं होगी, हम योगाभ्यास कर पाएँगे या नहीं कर पाएँगे।

इस तरह समत्व-योग का विवेचन करते हुए भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं कि अति चाहे निद्रा में हो, चाहे जागरण में, चाहे अति भोजन में हो या भूखे रहने में, समत्व-योग में बाधा है। इसलिए निद्रा, भोजन व जागरण संतुलित मात्रा में हो और ऐसा होने पर मनुष्य की चेतना ऊर्ध्वगामी होती है।

हमारी निद्रा का सीधा संबंध हमारे मन से है और भोजन का सीधा संबंध प्राण से है। यह बात बड़ी महत्त्वपूर्ण है। जब मन परेशान होता है, असहज होता है तो नींद नहीं आती और जब हमारा प्राण असंतुलित होता है तो भी व्यक्ति को न तो भूख लगती और न ही ठीक से नींद आती है और इस अवस्था में वह रोगी हो जाता है, लेकिन यदि निद्रा संतुलित हो जाए तो वह योगनिद्रा बन जाती है। योगी वह है, जिसकी निद्रा योगनिद्रा हो जाए और वो सुषुप्ति से तुरीय में प्रवेश करे।

भगवान योग-साधना के इस सूत्र में बताते हैं कि भोजन और शयन को संतुलित करके स्वस्थ शरीर और स्वच्छ मन का निर्माण करो; क्योंकि जिनके पास स्वस्थ शरीर और स्वच्छ मन है, उन्हीं के लिए यह योग-साधना है, उन्हीं के जीवन के योगमय होने की संभावना व सुनिश्चितता है।

(8) अष्टम् दिवस—योगारूढ़ अवस्था। इसी को महर्षि अरविंद ने 'ऑल लाइफ इज़ योग' कहकर वर्णित किया है। खाना-पीना, सोना-जागना, चलना-फिरना—सभी दशाओं में वह योगयुक्त अथवा योगारूढ़ हो जाता है। फिर उसकी जीवन चेतना में सब ओर प्रसन्नता छा जाती है। उसके दुःखों का हरण हो जाता है और उसे सहज व स्वाभाविक हास्य रस की अनुभूति होती है।

इस अवस्था में भगवान श्रीकृष्ण योग-साधना का अपना अगला सूत्र कहते हैं—

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा॥

दु:खों का नाश करने वाला यह योग तो यथायोग्य आहार और विहार करने वाले का तथा कर्मों में यथायोग्य चेष्टा करने वाले का और यथायोग्य शयन करने तथा जागने वाले का ही सिद्ध होता है। दु:खों का नाश करने वाला योग संभव तभी होता है, जब सही जीवनशैली हो, जिसमें उचित आहार और विहार, कर्मों में उचित चेष्टा, उचित शयन, उचित जागरण हो, तभी योग दु:खों को हरण करने वाला संभव होता है।

हर एक की अपनी जीवनशैली होती है। भगवान श्रीकृष्ण ने जीवनशैली को परिभाषित नहीं किया है, लेकिन इसके लिए एक शब्द प्रयुक्त किया है—युक्त। भगवान बुद्ध ने भी अपने अष्टांग मार्ग में एक शब्द का प्रयोग किया है—सम्यक। सम्यक दृष्टि, सम्यक वाचा, सम्यक कर्म। सम्यक यानी कि ठीक-ठीक, जितना ठीक है उतना।

युक्त का अर्थ भी है—सम्यक, उचित, ठीक-ठीक। इसका यह अर्थ भी है—सदा-सर्वदा योग में सम्यक रूप से लीन। यही वह योगारूढ़ अवस्था है, जिसे महर्षि अरविंद, महर्षि रमण एवं परमपूज्य गुरुदेव जैसे महामानवों ने जीवन जिया। इसी अवस्था में होता है—दु:खों का हरण। यह भगवच्चेतना में लय-विलय की अवस्था है।

(9) नवम् दिवस—आत्मस्वरूप में प्रतिष्ठा। योगारूढ़ अवस्था के पश्चात अब योग-साधना के चरम का अंतिम क्रम आता है—आत्मस्वरूप में प्रतिष्ठा। इसमें योगसाधक योगसिद्ध हो जाता है। इस सिद्धावस्था में उसकी जीवन-चेतना में समाधि की शांति का निर्झर फूट पड़ता है।

इस अवस्था में भगवान श्रीकृष्ण योग-साधना का सूत्र कहते हैं—

यदा विनियतं चित्तमात्मन्येवावतिष्ठते।
निःस्पृहः सर्वकामेभ्यो युक्त इत्युच्यते तदा॥

अत्यंत वश में किया हुआ चित्त जिस काल में अपने स्वरूप में (परमात्मा में) ही स्थित हो जाता है और संपूर्ण पदार्थों से निस्पृह हो जाता है, उस काल में वह योगी है, ऐसा कहा जाता है।

योगसाधक जब अपने जीवन से अहंकार की सत्ता समाप्त करता है, कामनाओं की सत्ता समाप्त करता है, कलुष की सत्ता समाप्त करता है, विषाद और अवसाद की सत्ता समाप्त करता है और अपने जीवन में सत्य की प्रतिष्ठापना करता है, अहं की प्रतिष्ठापना करता है, अपने जीवन का पुनर्निर्माण और नवनिर्माण करता है, तब उसके जीवन में सब कुछ बदल जाता है। भगवान कहते हैं कि जब ऐसा होता है यानी जब चित्त वश में होता है, जब आत्मा में प्रतिष्ठा होती है, जब मन की सारी कामनाएँ विलीन हो जाती हैं, तब उसे योगी कहा जाता है, तब वो योगसिद्ध कहलाता है।

योग की यह सिद्धावस्था ही योग-साधना का चरम व परम है। इसमें न केवल चित्त की कामनाएँ विलीन होती हैं, बल्कि सिद्धियों व विभूतियों का भी लोप हो जाता है। योगसिद्ध की इस अवस्था में साधक, योगसूत्र में वर्णित क्लेश व कर्म की कक्षा भी पार कर लेता है। तभी तो इस अवस्था के लिए कहा गया है—'**ततः क्लेश कर्म निवृत्तिः**' इस योग-साधना का स्वयं के जीवन में यदि अनुभव प्राप्त करना हो तो बस, तीन तत्त्वों की जरूरत है—(1) ईश्वर के लिए व्याकुलता, इसे ही कहते हैं—तीव्र अभीप्सा। दूसरा तत्त्व है—शनैः शनैः भगवान का स्मरण करते हुए उनमें समर्पित होना अर्थात (2) स्मरण व समर्पण। और अंत में तीसरा तत्त्व है, उन्हीं में पूरी तरह से विलीन होना, यही (3) पूर्ण निवेदन है। स्वयं का प्रभु में यही लय व विसर्जन हमें योग-साधना के सभी रहस्यों की अनुभूति कराने में सक्षम है। ❑

पर्यावरण असंतुलन का वीभत्स स्वरूप

सदियों से चला आ रहा ऋतुचक्र गड़बड़ाने लगा है। गरमी का प्रकोप हर वर्ष बढ़ता जा रहा है। ग्लेशियर पिघलने लगे हैं, ओजोन की परत में छेद हो गया है। विश्वभर में पानी की भीषण कमी के स्पष्ट संकेत मिलने लगे हैं। पर्यावरण-संरक्षण आज सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण एवं चर्चित मुद्दा बन गया है। विश्वभर में संस्थाएँ इस दिशा में क्रियाशील हो गई हैं।

सरकारी स्तर पर भी कदम उठाए जा रहे हैं, पर जनजागरण की सर्वाधिक आवश्यकता है। विडंबना यह है कि एक ओर तो पर्यावरण-संरक्षण के प्रयास हो रहे हैं तो वहीं दूसरी ओर पर्यावरण को दूषित करने वाले कारण यथावत् बने हुए हैं, बल्कि उनमें निरंतर वृद्धि हो रही है।

उदाहरणस्वरूप दुपहिया तथा चार पहिया वाहनों से निकलने वाले धुएँ से होने वाले प्रदूषण को ही लें—एक ओर सल्फररहित पेट्रोल तथा सी०एन०जी० के प्रयोग पर जोर दिया जा रहा है तो दूसरी ओर वाहनों की संख्या में दिनोंदिन अंधाधुंध वृद्धि हो रही है। इस समस्या ने जितना विकराल रूप धारण कर लिया है, उसके अनुपात में समाधान की गति एवं उत्साह नगण्य ही कहे जा सकते हैं।

पर्यावरण-संरक्षण के महायज्ञ में जन-जन की सहभागिता परम आवश्यक है और यह सहभागिता जुटाने में प्रिंट एवं दृश्य-श्रव्य माध्यमों का सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण योगदान हो सकता है। आवश्यक है कि बच्चों से लेकर बूढ़ों एवं महिलाओं तक हरेक व्यक्ति के मन-मस्तिष्क में पर्यावरण-प्रदूषण की भयावहता, उसके गंभीर परिणाम तथा पर्यावरण-संरक्षण में उसके अपने योगदान का सुस्पष्ट चित्र अंकित हो जाए। उसे समझ आ जाए कि उसे क्या करना है और क्या नहीं करना है। अभी तक पर्यावरण-संरक्षण की चर्चा-परिचर्चा, उच्चस्तरीय गोष्ठियाँ, सेमिनारों, सभाओं तक ही सीमित है। आम आदमी आज भी इस हलचल से अनभिज्ञ है, इसलिए उदासीन भी है।

इन प्रयासों में गति तभी आ पाएगी, जब तक हरेक घर, हरेक परिवार, हरेक गृहिणी और एक-एक बच्चे की जबान पर पर्यावरण-संरक्षण की बात होगी। इस अभियान को युद्धस्तर पर चलाना होगा। पर्यावरण को दूषित करने वाली हमारी नासमझी, हमारी परंपराओं, हमारी आधुनिकता, हमारी वैज्ञानिक प्रगति, हमारे स्वार्थगत लोभ, हमारे नेताओं को वोट की भूख, सभी का मिला-जुला योगदान है।

झुग्गी-झोंपड़ियों की बसाहट यहाँ-वहाँ, जहाँ-तहाँ गंदी बस्तियों का कुकुरमुत्तों की भाँति उगते जाना वर्षों से एक आम बात हो गई है, जहाँ सामान्य नागरिक सुविधाओं का नामोनिशान तक नहीं होता। इस बढ़ते प्रदूषण की अनदेखी ही नहीं की जाती, बल्कि यह कहना अधिक सही होगा कि इसे ढके-छिपे बढ़ावा दिया जाता है।

पेड़ कटते ही चले जा रहे हैं। कानून हैं, मगर मिलीभगत से उनकी धज्जियाँ उड़ाई जाती हैं। भ्रष्टाचार हमारे खून में घुल चुका है। साधनसंपन्न अपने को हर कानून से ऊपर मानता है, हर प्रकार से मनमानी करता है। योजनाएँ बनाई जाती हैं, मगर वह पूरी नहीं होतीं। स्वच्छता अभियान पर करोड़ों रुपये खरच कर दिए गए, किंतु कागजों में। प्रदूषण पहले से भी अधिक बढ़ गया है।

ऐसा लगता है कि थोड़ा-बहुत, आधा-अधूरा जो कुछ भी हो रहा है उसमें किसी स्पष्ट नीति, कार्ययोजना का नितांत अभाव है। शासन-प्रशासन, कानून का डर किसी को भी नहीं रहा, जिसके जो समझ में आए वह कर रहा है। जगह-जगह अतिक्रमण आम बात है।

जमीन की भूख ऐसी बढ़ गई है कि लोग निकास के रास्ते तक बंद कर देते हैं। गंदे पानी के नालों पर दुकानें और मकान बन जाते हैं। रेलवे लाइनों के किनारे मीलों तक झोंपड़ पट्टियाँ नजर आती हैं।

नगरों के आस-पास के सुंदर टीलों और पहाड़ियों का कत्लेआम आम बात है। वहाँ पत्थरों को तोड़-तोड़कर झुग्गी-झोंपड़ियाँ बसती जा रही हैं। प्राकृतिक संपदा का जैसे कोई वारिस ही नहीं रहा। सब्जी मंडियाँ कीचड़, कचरे का पर्याय बन कर रह गईं। न कोई देखने वाला है न सुनने वाला, एवरेस्ट शिखर तक पर पर्वतारोही दल टनों कचरा छोड़ आते हैं।

अस्पतालों, नर्सिंग होमों का जैविक कचरा खुले में डाला जाता है। पढ़ने वाले बच्चों, बीमारों, वृद्धों की असुविधा का किसी को ध्यान नहीं। मोटरसाइकिलों, स्कूटरों से एक्जॉस्ट हटाकर भयंकर शोर करते हुए सड़कों पर दौड़ाया जाता है। गाड़ियों में लगे प्रेशर हॉर्न आने-जाने वालों के कानों को बहरा करते चलते हैं। साइलेंस जोन अभी भी हैं, किंतु उपेक्षित। घर-घर में बोरवैल खुदवाए जा रहे हैं, जिससे जमीन के नीचे का जलस्तर निरंतर गिरता जा रहा है।

पशु-पक्षी तेजी से लुप्त होते जा रहे हैं। गिद्धों की अचानक घटती संख्या आजकल चर्चा का विषय बनी हुई है। नदियों और समुद्रों में बढ़ते प्रदूषण के कारण जल-जंतुओं का निरंतर ह्रास हो रहा है। करोड़ों वर्षों में प्रकृति ने जो सृजन किया था, वह हम कुछ ही वर्षों में मिटाने पर तुल गए हैं। विज्ञान और प्रकृति में बजाय सामंजस्य के एक होड़ लगी है।

प्लास्टिक की थैलियों ने तो कहर ही ढा रखा है। पशु उन्हें निगलते हैं और बिन आई मौत मरते हैं। दूषित पर्यावरण का कुप्रभाव मनुष्य के शारीरिक ही नहीं, मानसिक स्वास्थ्य पर भी पड़ रहा है। बीमारियाँ बढ़ रही हैं। नए-नए रोग अस्तित्व में आ रहे हैं। मनुष्य आत्मसंतुलन, धैर्य, सहिष्णुता खोकर हिंसक होता जा रहा है। यह तो थी पर्यावरण-प्रदूषण की एक छोटी-सी बानगी और भी बहुत कुछ कहा जा सकता है, किंतु अधिक विस्तार में यह न आवश्यक है न ही व्यावहारिक।

उद्धरेदात्मनात्मानं नात्मानमवसादयेत्।
आत्मैव ह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥

—श्रीमद्भगवद्गीता

अर्थात मनुष्य अपने द्वारा ही संसार-सागर से पार होता है और स्वयं ही अधोगति को प्राप्त होता है; क्योंकि यह आप ही अपना मित्र है और आप ही अपना शत्रु है।

अब समय कहने-सुनने का नहीं, वास्तव में कुछ करने का है। हर व्यक्ति इस संदर्भ में अपनी प्राथमिकताएँ खुद ही निश्चित कर ले और उन्हें कार्यरूप में परिणत करने में जुट जाए। समस्याएँ हमारे सामने हैं। अपनी परिधि के अंदर, अपनी क्षमता के अनुरूप, अपनी सामर्थ्य के अनुसार हम में से हरेक को अपना-अपना कर्त्तव्य स्वयं निश्चित करना है और उसे अमल में लाना है। पर्यावरण-संरक्षण के लिए जन-भागीदारी एवं जिम्मेदारी अभियान चलाकर इस समस्या से निजात पाई जा सकती है। ❑

राष्ट्र जागरण का आधार है—परिष्कृत भावना

राष्ट्रजागरण का आधार भावनात्मक शक्ति का सुनियोजन एवं क्रियान्वयन है। स्थिर एवं पवित्र भावनाओं से असंभव कार्य संभव हो सकते हैं। जो कार्य बड़ी-बड़ी योजनाएँ बनाने, बहुत समय और धन लगाने पर भी ठीक तरह नहीं हो सकते, वे भावनाएँ जाग्रत होने पर सहज ही पूरे हो सकते हैं। भावनाएँ जन-जन को जोड़ती हैं और जनशक्ति के सहयोग से असाधारण कार्य संपन्न हो सकते हैं। भावनाओं का जागरण ही राष्ट्र का वास्तविक जागरण है।

जब तक जनमानस में कर्त्तव्यबुद्धि और सामूहिकता के प्रति निष्ठा नहीं होगी, तब तक अन्य प्रयास उतने सार्थक सिद्ध नहीं हो सकते। जनभावनाओं के अभाव में हम प्रदर्शनात्मक और प्रचारात्मक तो बहुत कुछ कर सकते हैं, पर समुचित कार्य तभी होता है, जब उसे करने वाले की भावनाएँ सच्चे मन से कार्य करती हों। हमारी समस्त दुर्बलताएँ तभी समाप्त होंगी, जब भावनाएँ परिष्कृत होंगी। उस जागरण के साथ ही हमारा सर्वतोमुखी जागरण होगा। इस जाग्रति की स्थिति में कोई भी हमें चुनौती देने का साहस नहीं करेगा। कोई लुटेरा अपने मनसूबे में सफल नहीं हो सकेगा। सुरक्षा के लिए जागरण आवश्यक है।

राष्ट्रीय जागरण का अर्थ है—जनभावनाओं की प्रखरता, तेजस्विता और जाग्रति। सुरक्षा का सशक्त मोर्चा सेना सँभालती है और प्रगति का दूसरा मोर्चा प्रबुद्ध लोकसेवकों को सँभालना पड़ता है। सुरक्षा से प्रगति होती है।

यदि जनता का मनोबल जाग्रत है और वह अपनी त्रुटियों का समाधान करती हुई प्रगति की दिशा में अग्रसर हो रही है, तो यह विश्वास किया जा सकता है कि इसकी सुरक्षा स्थिर रहेगी, प्रतिष्ठा पर कोई आँच न आने पाएगी और सुख-शांति की परिस्थितियाँ आगे बढ़ेंगी। किंतु यदि जनमानस का झुकाव पतनोन्मुख चरित्र की ओर है, मनोबल और प्रयत्न शिथिल हो रहे हैं, तो यही समझना चाहिए कि बाहर का शत्रु हमारा भले कुछ न बिगाड़ सके, पर भीतरी दुर्बलताएँ बनी हुई हैं तथा वे ही नाश का कारण बनेंगी।

चुनौती की इस महत्त्वपूर्ण वेला में भारतमाता के सपूत अपने प्राण हथेली पर रखकर सीमा की रक्षा के लिए खड़े हैं। कितने ही प्राण विसर्जित कर चुके हैं, और कितनों को ही करने हैं। ये राष्ट्र के प्रहरी हमसे पूछते हैं कि हम इतना कर रहे हैं—प्रत्युत्तर में आप क्या कर रहे हैं ? हमें उसका उत्तर प्रखर तेजस्विता के साथ देना चाहिए। भावना के अभाव में प्रगति की सारी प्रक्रियाएँ निर्जीव, निष्क्रिय और निस्तेज बनी रहती हैं।

हमें जनमानस में कर्त्तव्यपालन की नीति, धर्म और सदाचार के प्रति आस्तिकता और परमार्थ की प्रचंड भावनाएँ उत्पन्न करनी चाहिए। ज्ञान से कर्म और कर्म से समृद्धि की उपलब्धि होती है। जैसे विचार मन में उठेंगे, शरीर में वैसे ही कर्म बन पड़ेंगे और जैसे कर्म होंगे, वैसा ही परिणाम सामने उपस्थित होगा। इसलिए हमें ज्ञान का, भावना का महत्त्व समझना चाहिए और उसके विकास का

समुचित प्रयत्न करना चाहिए। संसार में जब भी भले या बुरे परिवर्तन हुए हैं, तब उनके मूल में विचार-परिवर्तन की प्रक्रिया ही मुख्य आधार रही है।

बुद्ध, विवेकानंद, महावीर, ईसा, मुहम्मद, गांधी, दयानंद जैसी प्रखर विचारधाराएँ आँधी और तूफान की तरह होती हैं। मनुष्य उनके प्रभाव में सूखे पत्तों की तरह इधर-उधर उड़ते रहते हैं। हमें मनुष्य-को-मनुष्य बनाने की विचारधारा को जनमानस में गहराई तक प्रवेश कराते हुए परिवर्तन की महान प्रक्रिया को सफल बनाना चाहिए।

देशव्यापी अगणित बुराइयों, दुर्बलताओं और कुरीतियों का उन्मूलन करने के लिए भागीरथी प्रयास की आवश्यकता होती है। मनुष्य को सच्चे अर्थों में मनुष्य बनाने के लिए आगे चलकर हमें अनेक विशाल कार्यक्रम बनाने पड़ेंगे। जहाँ आवश्यक होगा, वहाँ संघर्ष की भूमिका में भी उतरना पड़ेगा।

सबसे पहला कार्य यह है कि लोग इस परिवर्तन की आवश्यकता को समझें और उसके लिए आवश्यक त्याग करने के लिए स्वयं जागरूक हों। ऐसी बौद्धिक पृष्ठभूमि तैयार करने के लिए हमें आज से ही प्रवृत्त हो जाना चाहिए।

यह कार्य जितना सरल है, उतना ही महत्त्वपूर्ण भी है। छोटे कार्य को आज आरंभ करें, बड़े काम कल करने के लिए अपने आप ही सामने प्रस्तुत होंगे। नैतिक, बौद्धिक और सामाजिक क्रांति का कार्य संपन्न होने पर ही स्वतंत्रता का सर्वांगपूर्ण परिदृश्य दृष्टिगोचर होगा। स्वराज्य का महत्त्व इसलिए होता है कि उसके उपरांत प्रजा को अपने भाग्य को जगाने, बिगाड़ने की स्वाधीनता मिल जाती है।

जिन लोगों ने स्वाधीनता संग्राम का यज्ञ रचा था, उनकी कल्पना यही थी कि भारतीय समाज सभी दिशाओं में गई-गुजरी स्थिति में पड़ा है, पर स्वराज्य के बाद उन सबको ठीक करना सरल हो जाएगा।

जितना त्याग इस मोर्चे पर करना पड़ रहा है, उतना उन मोर्चों पर नहीं करना पड़ेगा। इसलिए राष्ट्रनिर्माण के कार्यों को करने के लिए अनेक गुना लोकसेवी आ खड़े होंगे। प्रथम मोर्चे पर सफलता मिलने के उपरांत लोगों का उत्साह भी बहुत बढ़ेगा और वे अधिक तत्परतापूर्वक देश को समुन्नत बनाने में लग जाएँगे।

आज परिस्थिति अत्यंत विपन्न एवं विपरीत है। देशभक्ति के लिए, पिछड़े हुए राष्ट्र को ऊँचा उठाने के लिए, अधिक-से-अधिक त्याग करने की जो होड़ परस्पर लगी हुई थी, वह स्वराज्य के बाद और भी अधिक तीव्र होनी चाहिए थी। हमें खेदपूर्वक स्वीकार करना पड़ता है कि वह भावना पूरी तरह समाप्त तो नहीं हुई है, परंतु बुरी तरह शिथिल अवश्य हो गई है।

यह उन बलिदानी शहीदों की अवमानना एवं उनका अपमान है, जो हमारे ऊपर क्रांति के एक भारी अंश को पूरा करने का उत्तरदायित्व सौंपकर गए हैं। उन्हें यह संपूर्ण विश्वास था कि हमारे बाद की पीढ़ी हमसे भी अधिक देशभक्त एवं भावनाशील होगी। जो कार्य हमसे शेष रहेगा, उसे वह सहज ही पूरा कर लेगी और समुन्नत भारत का मनोरम चित्र कल्पना मात्र न रहकर अगले दिनों साकार होकर रहेगा।

आज राष्ट्रनिर्माण का बहुत बड़ा भाग पूरा करने के लिए बाकी पड़ा है। ऐसे में इस प्रकार की शिथिलता एवं उदासीनता अत्यंत दु:खदायक प्रतीत होती है। विचारक्रांति का महान कार्य अभी तक लगभग बिलकुल अधूरा पड़ा है। सामाजिक क्रांति होनी शेष है।

शहीद जो जिम्मेदारियाँ छोड़ गए हैं, उनको पूरा करने के लिए अब किसी को जेल जाने, फाँसी

पर लटकने, घर छोड़ने या अपनी अर्थव्यवस्था नष्ट करने की आवश्यकता नहीं है। केवल इतना करना है कि अपनी भावनाओं को शांत, स्थिर एवं पावन बनाए रखना है। अपने व्यक्तिगत कार्यों में, व्यावसायिक, पारिवारिक कार्यों में लगे रहने के बावजूद लोक-कल्याण के लिए कुछ समय निरंतर लगाते रहने का व्रत ग्रहण कर लेना चाहिए। आवश्यक है कि जैसे दैनिक जीवन के अन्य कार्यों और उत्तरदायित्वों का निरंतर ध्यान रखा जाता है, इसी प्रकार समाज के नवनिर्माण के लिए भी प्रयत्नशील रहा जाए।

शरीर और मन की शक्तियों का कुछ अंश भी इस दिशा में हम लोग लगाए रखें। बौद्धिक और सामाजिक क्रांति के सपने बुनकर विदा होने वाले जीवित और स्वर्गीय स्वतंत्रता सेनानियों की आत्माएँ जहाँ कहीं भी हों, हमारे सत्प्रयत्नों को देखकर वे संतोष प्राप्त कर सकें। भविष्य के कदमों की आहट जिन्होंने भी सुनी है, उन सबका प्राय: यही कहना है कि कल की दुनिया शहरों की नहीं, गाँवों की होगी।

हमारी स्वार्थ एवं अहंकार से सनी भोगपरायण मनोवृत्ति ने शहरों की तो अंधाधुंध बढ़ोत्तरी की, पर पर्यावरण संतुलन को इस सीमा तक बिगाड़ दिया कि पर्यावरण संकट खड़ा हो गया। यह सबसे भयावह संकट बन गया।

इसके सामने परमाणविक विभीषिका भी नगण्य लगने लगी है। अपने सुख-साधनों को बढ़ाने के फेर में हमने गाँवों को तो उजाड़ फेंका पर साथ ही पारिस्थितिकीय संतुलन भी नष्ट कर बैठे। स्वयं को विचारशील एवं बुद्धिमान समझने वाले सभी यह भूल गए कि प्रकृति तो समग्रता में है।

स्वार्थयुक्त बुद्धि और संकीर्ण मानसिकता ने जिस विश्व की रचना की है, उससे अकेले मानवीय अस्तित्व की ही नहीं, बल्कि प्राणिमात्र व वनस्पति जगत् आदि सबके संपूर्ण विनाश का खतरा है। यदि हम जीवित रहना चाहते हैं तो फिर से गाँवों की ओर लौटना पड़ेगा।

आज परिस्थितियों ने मानवता को इस मोड़ पर ला खड़ा किया है कि ग्राम्य जीवन को पुनर्जीवित करने, उसका नवोत्थान करने के अलावा और कोई उपाय शेष नहीं बचा है। संयम और सादगी से ओत-प्रोत ग्रामीण संस्कृति ही मानव को उसके वर्तमान अँधेरे से निकालकर उज्ज्वल भविष्य की डगर पर चला सकती है।

प्रकृति एवं पर्यावरण को सुरक्षित एवं संरक्षित करके ही जीवन की परिकल्पना की जा सकती है। जीवन के लिए आवश्यक हवा, पानी एवं भूमि को परिष्कृत एवं स्वच्छ करना जरूरी है। प्रकृति एवं मानव के बीच संवाद का आधार हमारी संवेदना है। हमारी संवेदना जब संवेदित होगी, भावना परिष्कृत होगी तभी राष्ट्रनिर्माण का भागीरथ प्रयास अवश्य सफल हो सकेगा। ❑

रेगिस्तान से एक काफिला जा रहा था। मार्ग में एक पेड़ मिला जिस पर बहुत से फल लगे हुए थे। काफिले के लोगों ने फल खाने की इच्छा जाहिर की।

काफिले का सरदार बोला—''किसी भी कार्य को अंजाम देने से पूर्व उसकी विवेकसम्मत जाँच कर लेनी चाहिए। यदि ये फल सही होते तो पूर्व में गुजरा काफिला इन्हें खा चुका होता।''

जाँच करने पर फल जहरीले पाए गए। मनुष्य को कार्य करने से पूर्व जाँच लेना सही रहता है।

भारत की ऐतिहासिक उपलब्धि

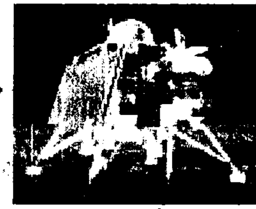

चंद्रयान-3 की सफल लैंडिंग के साथ भारत ने एक नया इतिहास रच दिया है। इसरो के वैज्ञानिकों की इस ऐतिहासिक उपलब्धि के साथ जहाँ पूरा देश रोमांचित हुआ, वहीं समस्त भारतवंशियों के लिए विश्वभर में ये गर्व एवं गौरव के अविस्मरणीय पल रहे। इसने जहाँ अंतरिक्ष में और आगे इसके गहन विस्तार में यात्राओं एवं खोज का मार्ग प्रशस्त किया, वहीं पूरे विश्व को भारत की अंतरिक्षीय क्षेत्र में अनुसंधान-क्षमता की धमक से भी गाढ़ा परिचय करवाया।

हालाँकि चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव की सतह पर यह लैंडिंग इतनी आसान नहीं थी; क्योंकि यहाँ बड़े-बड़े गड्ढे हैं तथा तापमान माइनस 300 डिगरी फारेनहाइट तक नीचे जाता है। साथ ही यहाँ अंधकार की स्थिति कार्य को और कठिन बना देती है। आश्चर्य नहीं कि रूस का मून मिशन लूना-25 भारत की इस उपलब्धि के कुछ ही दिन पहले चाँद की सतह से टकराकर क्रेश हो गया था।

भारत भी सन् 2019 में चंद्रयान-2 अभियान के दौरान ऐसी असफलता का दंश झेल चुका है, जब लैंडिंग के दौरान विक्रम लैंडर चंद्रमा की सतह पर टकराकर नष्ट हो गया था। हमारे वैज्ञानिकों ने इसकी गलतियों से सीख लेते हुए, अपने अथक श्रम, समर्पण एवं होशियारी के बल पर चंद्रयान-3 मिशन को सफल बनाकर, एक इतिहास रच दिया।

आज भारत पूरे विश्व में चंद्रमा के दक्षिणी ध्रुव पर पहुँचने वाला पहला देश बन गया है। जिस भारत को कभी एलीट स्पेस क्लब में प्रवेश को लेकर विदेशी अखबारों में मजाक भरे कार्टून छपते थे, भारत को इस एलीट ग्रुप के दरवाजे के बाहर गाय के साथ खड़े एक गरीब किसान के रूप में दरवाजा खटखटाता हुआ चित्रित किया जाता था तो वहीं इस सफल अभियान के साथ भारत ने न केवल एलीट स्पेस क्लब में धमाकेदार एंट्री की है, बल्कि वह सबके लिए एक मिसाल भी बन गया है।

पूरा विश्व भारत की इस अभूतपूर्व सफलता के साथ चमत्कृत है और आशा व उत्सुकता भरी दृष्टि के साथ भारत के अगले कदमों की ओर निहार रहा है, जिसमें उसे सूर्ययान, गगनयान, शुक्रयान जैसे अभिनव अभियानों के साथ अनंत आकाश में अपने रोमांचक अभियानों को अंजाम देना है।

भारत की यहाँ तक की यात्रा इतनी सरल भी नहीं रही है। एक दीर्घकालीन संघर्ष, अथक श्रम एवं अध्यवसाय के बल पर देश इस मुकाम तक पहुँचा है। वैज्ञानिकों की पीढ़ियाँ इसमें खपी हैं, डॉ० विक्रम साराभाई से लेकर डॉ० अब्दुल कलाम आजाद, डॉ० के सिवान से लेकर डॉ० एस० सोमनाथन व सहयोगी वैज्ञानिकों तथा तकनीकी विशेषज्ञों की टीम के दशकों के कठोर श्रम व एकनिष्ठ समर्पण का यह सुखद परिणाम रहा है।

निस्संदेह रूप में पूरा देश इनके त्याग-तप भरे कुशल नेतृत्व एवं प्रयासों के लिए हृदय की गहराइयों से कृतज्ञता एवं शुभकामनाओं से भरा हुआ है। आजादी के बाद भारत ने अंतरिक्ष से जुड़े रहस्यों को जानने के लिए 16 फरवरी, 1962 को परमाणु ऊर्जा विभाग के अंतर्गत इंडियन नेशनल कमेटी फॉर स्पेस रिसर्च नामक यूनिट का गठन किया था।

यूनिट गठन के साढ़े सात वर्ष पश्चात 15 अगस्त, 1969 को इंडियन स्पेस रिसर्च ऑर्गेनाइजेशन

अर्थात इसरो की स्थापना हुई। इसने सन् 1975 में रूस के सहयोग से अपने पहले कृत्रिम उपग्रह आर्यभट्ट का प्रक्षेपण किया, जिसके साथ देश ने अंतरिक्ष में अपने पैरों को जमाया।

इसके बाद सन् 1980 में भारत के पहले स्वदेशी उपग्रह रोहिणी का सफल प्रक्षेपण किया गया और फिर सन् 1994 में पीएसएलवी को लान्च किया। इस तरह भारत ने चंद्रयान से पहले अंतरिक्ष अनुसंधान के क्षेत्र में कई महत्त्वपूर्ण कदम उठाए थे और उपग्रहों के प्रक्षेपण की स्वदेशी तकनीक को विकसित किया था।

भारतीय अंतरिक्ष अनुसंधान संगठन और सोवियत संघ के इंटरकॉस्मिक कार्यक्रम के संयुक्त अभियान के अंतर्गत वर्ष 1984 में राकेश शर्मा ने आठ दिन तक अंतरिक्ष में रहकर इतिहास रचा था, जब वे अंतरिक्ष यात्रा करने वाले पहले भारतीय बने थे।

सन् 2013 में इसरो ने मंगल ग्रह से जुड़ी जानकारियाँ जुटाने के उद्देश्य से मंगलयान छोड़ा। जो अपनी किफायती तकनीकि व न्यूनतम खरचे में सफलता के लिए पूरे विश्व में चर्चा का विषय रहा।

इस बीच स्वदेशी उपग्रह के निर्माण और उपग्रह प्रक्षेपण की कम तुलनात्मक लागत के कारण वैश्विक स्तर पर भारत तेजी से आगे बढ़ता रहा। वर्ष 2017 में इसरो ने 104 उपग्रहों को एक साथ अंतरिक्ष की कक्षा में स्थापित करने का कीर्तिमान स्थापित किया था, जिसमें 101 स्वदेशी उपग्रह थे। इसके साथ भारत विश्व में सौ से अधिक उपग्रह भेजने वाला पहला देश बन गया था।

आश्चर्य नहीं कि आज भारत उपग्रहों के प्रक्षेपण करने वाले पसंदीदा देशों में शीर्ष पर है। इसी तरह चाँद पर जीवन की संभावनाओं को तलाशने के लिए इसरो ने तीन मिशन चलाए। चंद्रयान—1 का सफल प्रक्षेपण 22 अक्टूबर, 2008 को संपन्न हुआ था, जिससे चंद्रमा से जुड़े रहस्यों को जानने में सहायता मिली।

प्रक्षेपण से मात्र आठ महीनों में ही चंद्रयान—1 ने मिशन के सभी लक्ष्यों को पूरा कर लिया था। इस मिशन के अंतर्गत चंद्रमा के सतह पर जल तथा बरफ की खोज के साथ खनिज और रासायनिक तत्त्वों की पुष्टि हुई थी। साठ हजार से अधिक फोटो भेजने के साथ इसने चंद्रमा के ध्रुवीय क्षेत्र के स्थायी रूप से छायादार क्षेत्रों में पहाड़ों तथा क्रेटर के दृश्यों को कैमरे में कैद किया था।

चंद्रयान—3 को इसी का अगला सफल चरण रहा। कभी साईकल पर रॉकेट लादकर अपने आकाशीय अभियान की शुरुआत करने वाला भारत आज इस क्षेत्र में एक विशेषज्ञ के रूप में स्थापित हो चुका है और अपनी स्वदेशी प्रतिभाओं तथा देशज तकनीक के बल पर उभरते भारत की धमक लिए गगनमंडल के अनंत विस्तार में अपने महत्त्वाकांक्षी लक्ष्यों का संधान कर रहा है।

हर नागरिक, हर भारतवंशी के हृदय का इन पलों को अपने जीवनकाल में घटित होते हुए देखकर गर्व एवं गौरव-भाव से ओत-प्रोत होना स्वाभाविक है। निश्चित रूप से ये पल भारतवर्ष के जागरण के हैं, विश्वपटल पर उदय के हैं, जिसमें उसे न केवल अपना घर सँभालना है, बल्कि पूरे विश्व का नेतृत्व करना है, उसका मार्गदर्शन करना है।

अमृतकाल के इन विशिष्ट पलों में हर नागरिक एवं भारतवंशी का कर्त्तव्य बनता है कि वे अपने-अपने क्षेत्र में ऐसी ही लगन, निष्ठा व प्राणपण के साथ सृजनकार्य में जुट जाएँ और राष्ट्रनिर्माण के महायज्ञ में अपनी भावभरी आहुति देते हुए एक सुंदर, सुखी एवं खुशहाल विश्व के निर्माण में अपना योगदान दें तथा इस सुरदुर्लभ जीवन को सार्थक-सफल बनाएँ। ❑

महामानवों के जागरण का समय

साधना शताब्दी मनाए जाने का सुविचार अब उत्साह व उल्लास में बदलने लगा है। गायत्री परिवार के परिजनों के साथ अन्य अनगिनत, असंख्य साधनाप्रेमी जन-जन के मन में इस महोत्सव का महोल्लास अब उफनने-उमड़ने लगा है।

वर्ष 1926 ई० की वसंत पंचमी की ब्राह्मवेला में अपनी भारतभूमि के उत्तर प्रदेश प्रांत के आगरा जनपद के गाँव 'आँवलखेड़ा' की छोटी-सी कोठरी में प्रज्वलित किए गए लघुदीपक के प्रकाश के सान्निध्य में पंद्रहवर्षीय बालक श्रीराम ने अपने महान गुरु के निर्देशन-मार्गदर्शन में गायत्री महामंत्र के 24 वर्षीय 24 महापुरश्चरणों की शृंखला, कठोर तप-अनुशासन के साथ आरंभ की। यह कठिन साधना का संकल्प था, जिसे अभी न जाने कितने पड़ाव पार करते हुए सुदीर्घ अवधि की अति दीर्घ साधना-यात्रा संपूर्ण करनी थी।

यह महासंकल्प इस शतवर्षीय कठिन तप-साधना का आरंभ भर था। यह उनके सुदीर्घ साधना-जीवन का शिलान्यास था। साधना के भव्य भवन का भूमिपूजन भर था। उस दिन जो दीप प्रदीप्त हुआ था, उस एक दीप की स्थापना दो स्थानों पर हुई थी। इनमें से एक स्थापना पूजास्थली पर हुई थी और दूसरी स्थापना इस महातपस्वी के अंतर्हृदय में हुई थी।

इन दोनों की सम्मिलित ज्योति ने ही मासिक पत्रिका 'अखण्ड ज्योति' का स्वरूप पाया, जो तब से अब तक समस्त भूमंडल में असंख्य साधकों की जीवन-ज्योति बनी हुई है। जो दीप उस दिन वसंत पंचमी की ब्राह्मवेला में प्रज्वलित हुआ था, वह भी तब से अब तक यथावत् प्रज्वलित-प्रकाशित है। असंख्य जन आज भी उसके प्रकाश से जीवन-साधना—गायत्री-साधना के लिए प्रेरित होते हैं।

इस साधना दीप के प्रकाश में केवल गायत्री महामंत्र के 24 महापुरश्चरण ही संपन्न नहीं हुए, बल्कि उसके प्रकाश में साहित्य, संस्था व संगठन का विशाल व्यापक स्वरूप साकार हुआ। गायत्री महापुरश्चरणों की अनुभूतियाँ गायत्री महाविज्ञान का महाग्रंथ बन गईं। गायत्री का ज्ञान अन्य साढ़े तीन हजार पुस्तकों के रूप में प्रकट और प्रकाशित हुआ। साधना और साहित्य ने जिन्हें अपने में पिरोया, उन्हीं समर्पित साधकों ने संस्था व संगठन का विस्तार किया।

यह कठिन साधना का संकल्प था, जिसे अभी न जाने कितने पड़ाव पार करते हुए सुदीर्घ अवधि की अति दीर्घ साधना-यात्रा संपूर्ण करनी थी।

(1) आँवलखेड़ा, (2) अखण्ड ज्योति संस्थान, (3) गायत्री तपोभूमि, (4) ब्रह्मवर्चस शोध संस्थान, (5) शांतिकुंज एवं (6) देव संस्कृति विश्वविद्यालय के रूप में मथुरा व हरिद्वार में उन महान तपस्वी का आध्यात्मिक वर्चस् ही प्रकट हुआ है। उन्हीं के अंग-अवयव के रूप में करोड़ों-करोड़ों गायत्री परिजन आज देश व धरती में चहुँओर फैले हुए हैं। आज ये असंख्यों को अपने जीवन से जीवनमार्ग दिखा रहे हैं।

यह सब गायत्री महाविद्या की महासाधना के महाविस्फोट का दृश्य रूप है। यह वह सब है, जिसे हममें से हरेक अपनी खुली आँखों से देख सकता है। इस सब कुछ के अलावा और भी ऐसा बहुत कुछ है, जिसे हम अपनी खुली आँखों से नहीं देख पा रहे हैं। शतवर्षीय साधना के दृश्य के अलावा अदृश्य परिणाम बहुत व्यापक हैं। यह सब जो कुछ भी है, वह सबका सब उस महान अतिमानव की साधना-सामर्थ्य का परिचय है, जिन्हें हम परमपूज्य गुरुदेव के रूप में जानते हैं। लोकजीवन-सांसारिक-सामाजिक जीवन में जिनकी यशगाथा पं० श्रीराम शर्मा आचार्य नाम से गाई जाती है। तप से जिनका व्यक्तित्व विनिर्मित हुआ है और वेदज्ञान से, लोकज्ञान से जिनका कृतत्व प्रकट हुआ है।

उनके तप व ज्ञान का सम्यक व संपूर्ण परिचय दे पाना तो शायद किसी के लिए संभव न हो पाए; क्योंकि सम्यक परिचय दे पाने के लिए उनके बारे में सम्यक ज्ञान भी तो आवश्यक है और ऐसा इसलिए संभव नहीं है; क्योंकि उनका जीवन कभी सतह पर था ही नहीं। इसलिए जो कुछ दिख रहा है, वह उनके जीवन के अमृत कलश की कुछ बूँदें भर हैं।

हालाँकि इनमें भी विषनाशक अमरता का संदेश समाया है। वेद ज्ञान के रूप में वेद, उपनिषद्, ब्राह्मण, आरण्यक का भाष्य तो है ही, साथ में पुराणों, उपपुराणों व षड्दर्शन का भाष्य भी है। इसकी सीमा इतने तक सीमित नहीं है। इसमें और भी बहुत कुछ जैसे कि स्मृतियाँ आदि भी सिमटी हैं। लोकज्ञान में साहित्य-सृजन के साथ असंख्य परिजनों का प्रेम भी लिपटा है। यह प्रेम ऐसा है, जिसमें लिपटकर असंख्य परिजनों की पीढ़ियाँ उनके उद्देश्य के लिए पुरुषार्थ करते गुजर गईं।

'सब धरती कागज करूँ, लेखनि सब वनराय।
सागर सप्त की स्याही करूँ, गुरु गुन लिखा न जाय॥'

यदि मैं सारी धरती का कागज बना लूँ, सारे वनों की लकड़ियों को एक के बाद एक लेखनी बनाता चला जाऊँ और सभी सात सागरों की स्याही बनाकर लिखने के लिए बैठूँ, तब भी उनकी तप महिमा, ज्ञान महिमा, व्यक्तित्व महिमा व कृतत्व महिमा का बखान संभव नहीं है। यहाँ पर प्रयास तो बस यह कहने का है कि वर्ष 1926 की वसंत पंचमी की ब्राह्मवेला में आरंभ हुई साधना अभी तक थमी नहीं है। इन वर्षों में इसमें अनेक पड़ाव आए, बाधा-व्यतिक्रम भी आए। स्थान भी बदले और असंख्य तूफान भी आए। आँवलखेड़ा से मथुरा और मथुरा से हरिद्वार, बीच-बीच में होती रही हिमालय यात्राएँ और फिर अंत में साधना की तीव्रता को तीव्रतम बनाने के लिए स्थूलशरीर व स्थूलजीवन का त्याग।

शतवर्षीय साधना के दृश्य के अलावा अदृश्य परिणाम बहुत व्यापक हैं। यह सब जो कुछ भी है, वह सबका सब उस महान अतिमानव की साधना-सामर्थ्य का परिचय है, जिन्हें हम परमपूज्य गुरुदेव के रूप में जानते हैं। लोकजीवन-सांसारिक-सामाजिक जीवन में जिनकी यशगाथा पं० श्रीराम शर्मा आचार्य नाम से गाई जाती है। तप से जिनका व्यक्तित्व विनिर्मित हुआ है और वेदज्ञान से, लोकज्ञान से जिनका कृतत्व प्रकट हुआ है।

कैसा विचित्र संयोग बन पड़ा, स्थूलजीवन में स्थूलशरीर से कठोर तप का आरंभ हुआ था, वर्ष 1926 ई० की वसंत पंचमी की ब्राह्मवेला में। ज़बकि सूक्ष्मशरीर का सूक्ष्म जीवन का कठिन तप आरंभ हुआ वर्ष 1990 की गायत्री जयंती को। तब 1990 ई० की गायत्री जयंती को गायत्री महाविद्या का महासाधक स्वयं गायत्रीमय होकर सूर्य की तपन के साथ महातप में संलग्न हो गया। यह केवल जीवन के आयाम का परिवर्तन था। इस परिवर्तन में उनकी तप-साधना में न तो कोई विश्राम आया और न कोई अल्प या अर्द्धविराम, यह तो अविराम ही बनी रही। उनके संकेतों को समझकर, उनके अदृश्य दर्शन पाकर यह बात अनुभूतिपूर्ण विश्वास से कही-बताई जा रही है। इसे वर्ष 2026 तक यथावत् चलते चले जाना है।

अब जबकि वर्ष 2026 हम सबसे केवल दो कदमों की दूरी पर है; तो उभरते संकेतों के अनुसार यह निश्चित हुआ कि इस शतवर्षीय महातप के भावी परिणामों की अपने परिजनों के साथ चर्चा करें, इन्हें उनके साथ साझा करें। आखिर इस शतवर्षीय महान तप के महासागर में अपने प्रिय परिजनों के श्रम-सीकर भी तो समाये हैं। इसमें उनकी पीढ़ियों का पुरुषार्थ भी तो सँजोया है। आसुरी अँधियारे से हम सब परमपूज्य गुरुदेव के नेतृत्व में जूझते आए हैं।

हम ही तो प्रभु श्रीराम के रीछ-वानर हैं। हम ही तो उन गोवर्धनधारी के ग्वाल-बाल हैं। हम सब उनके जन्म-जन्मांतर के सहचर, सखा, भक्त और अनुगत अनुयायी हैं। हम ही तो उनके शिष्य हैं, दास हैं, अनुचर और अनुगामी हैं।

इसलिए हम सबको उनकी कथा सुनने का प्रथम अधिकार है। बस, इसलिए इस वर्ष 2024 ई० के आरंभ से—यह साधना शताब्दी विशिष्ट लेखमाला आरंभ की जा रही है। यह अब से 2026 के अंत में संपूर्ण होने वाली तप-साधना के परिणामों का हलका-सा परिचय है। इस शतवर्षीय साधना की संपूर्णता—इस दीर्घ अवधि तप-साधना के सौ वर्ष पहले हुए आरंभ का अंत है, लेकिन साथ ही वर्ष 2027 ई० के आरंभ से प्रारंभ हो रहे 24वर्षीय महातप का आरंभ भी है।

वर्ष 2026 से 2050 तक होने वाले सभी परिवर्तन—बीत रही शतवर्षीय साधना का परिणाम ही हैं। आने वाले ये 24 वर्ष प्रकृति में प्रकाश अवतरण के हैं। ये सभी परिवर्तन दुर्जनों के लिए अशुभ और सज्जनों के लिए शुभ होंगे। इसी समय इक्कीसवीं सदी में उज्ज्वल भविष्य का स्वरूप साकार, प्रकट व प्रत्यक्ष होगा। इसी समयावधि में परमपूज्य गुरुदेव की शतवर्षीय साधना के परिणाम सतयुग के सूर्योदय के रूप में दिखाई देंगे। अब हममें से किसी को बिना देर लगाए इस अति प्रतीक्षित सूर्योदय की सूर्य-आराधना के लिए तैयार व तत्पर होना है। ❑

समस्त संसार के मूर्द्धन्यों, शक्तिवानों और विचारवानों को आशंका एक ही है कि विनाश होने जा रहा है। हमारा अकेले का कथन यह है कि उलटे को उलटकर ही सीधा किया जाएगा। हमारे भविष्य कथन को अभी ही बड़ी गंभीरतापूर्वक समझ लिया जाए। विनाश की घटाओं को प्रचंड तूफानी प्रवाह अगले दिनों उड़ाकर कहीं ले जाएगा और अँधेरा चीरते हुए प्रकाश से भरा वातावरण दृष्टिगोचर होगा। यह ऋषियों के पराक्रम से ही संभावित है, इसमें कुछ दृश्यमान व कुछ परोक्ष भूमिका हमारी भी हो सकती है।

समर्पण की गरिमा

'समर्पण' में समर्पित सर्वस्व करना चाहिए।
एषणाओं से समर्पण दूर रहना चाहिए॥

समर्पण के वाद क्यों कामेषणा, वित्तेषणा।
सिर उठाए किसलिए फिर अहंजन्य लोकेषणा।
समर्पण में तो अहं का त्याग होना चाहिए॥

एषणाएँ हैं अहं की तुष्टि करने के लिए।
बात अस्तित्व की, इसी को पुष्ट करने के लिए।
क्यों समर्पण बाद, थोथा अहं ढोना चाहिए॥

समर्पण के बाद तो बस इष्ट ही सर्वस्व है।
इष्ट की इच्छा का ही तब शेष बस वर्चस्व है।
तुच्छ आकर्षण, विकर्षण में न खोना चाहिए॥

कर दिया जिसने समर्पण, मिल गई सब संपदा।
हो गया निर्विघ्न, निश्चिंत, कट गई सब आपदा।
समर्पण-आनंद फिर भरपूर लेना चाहिए॥

किया उन गुरु को समर्पण, जो स्वयं महाकाल हैं।
लोक-मंगल देवता वे, लोक के प्रतिपाल हैं।
लोक-मंगल में हमें सर्वस्व देना चाहिए॥

करें प्रतिभाएँ समर्पण, लोक-मंगल सध सके।
समर्पण विभूतियों का कल्याण सबका कर सके।
समर्पण से सृजित, नूतन विश्व होना चाहिए॥

— मंगलविजय 'विजयवर्गीय'

❝ हम में से एक भी ऐसा न रहे, जिसे मात्र पत्रिका का पाठक भर कहकर चुप रहा जा सके। विचारों की सार्थकता तब है, जब वे कार्यरूप में परिणत होने की दिशा में अग्रसर हो सकें। अखण्ड ज्योति के लेखों को परिजनों की मनोभूमि पर अब इस कसौटी पर कसे जाने का अवसर आ गया है। हमारे यह दोनों ही पक्ष तभी खरे कहे जा सकते हैं, जब उनमें सक्रियता का दर्शन हो सके। ❞

— अखण्ड ज्योति (जून, 1972)

अखण्ड ज्योति
(मासिक)
R.N.I. No. 2162/52

www.awgp.org

प्र. ति. 01-12-2023
Regd. N0. Mathura- 025/2021-2023
025/2024-2026
Licensed to Post without Prepayment
N0. : Agra/WPP-08/2021-2023
N0. : Agra/WPP-08/2024-2026

भारत सरकार के सामाजिक न्याय एवं अधिकारिता विभाग तथा अखिल विश्व गायत्री परिवार, शांतिकुंज–हरिद्वार के मध्य 'नशा मुक्त भारत अभियान' हेतु समझौता ज्ञापन पर हस्ताक्षर

राष्ट्रीय सेवा योजना, देव संस्कृति विश्वविद्यालय द्वारा **'मेरी माटी मेरा देश; मिट्टी को नमन वीरों का वंदन'** *विषय पर आधारित अमृत कलश यात्रा विद्यार्थियों की उत्साहपूर्ण भागीदारी के साथ संपन्न*

स्वामी, प्रकाशक, मुद्रक–मृत्युंजय शर्मा द्वारा जनजागरण प्रेस, बिरला मंदिर के सामने, जयसिंहपुरा, मथुरा से मुद्रित व अखण्ड ज्योति संस्थान, बिरला मंदिर के सामने, मथुरा-वृंदावन रोड जयसिंहपुरा, मथुरा–281003 से प्रकाशित। संपादक–डॉ. प्रणव पण्ड्या।
दूरभाष — 0565- 2403940, 2972449, 2412272, 2412273 **मोबाइल** — 09927086291, 07534812036, 07534812037, 07534812038, 07534812039
ईमेल–akhandjyoti@akhandjyotisansthan.org

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel के वीडियो युग निर्माण मिशन के लिए समर्पित है! हमारा एकमात्र उद्देश्य परम पूज्य गुरुदेव के विचारों को जन-जन तक पहुंचाने का है।

◆ पूज्य गुरुदेव द्वारा साधकों को दिए गए दिव्य प्रवचन, अमृत वाणी, ध्यान साधना

▼ आराध्य द्वारा लिखित पुस्तकों पर वीडियो, अखण्ड ज्योति के आर्टिकल, अमृत ज्ञान

◆ परम वन्दनीय माता जी द्वारा गाए गए भावनाशील प्रज्ञा गीत जो कि पूज्य गुरुवर को समर्पित रहे

▼ परम श्रद्धेय जी द्वारा लिखित पुस्तक आध्यात्मिक जीवन पर आधारित वीडियो एवम् आदरणीय चिन्मय भैया जी के दिव्यता से भरे उद्बोधन

एक छोटा सा प्रयास सभी प्रियजनों को गुरु के ज्ञान का अमृत पहुंचाने का...आप भी इस अमृत के ज्ञान को अधिक से अधिक लोगों तक पहुंचाने का प्रयास कर गुरुकार्य में भागीदार अवश्य बनें "!

आप इन वीडियो को डाउनलोड करके मिशन की गरिमा के अनुरूप प्रयोग कर सकते हैं। धन्यवाद

प्रस्तुत हैं शांतिकुंज ऋषि चिंतन चैनल पर

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel को Subscribe करने के लिए क्लिक कीजिये और Bell 🔔 बटन को जरूर दबाएं ताकि आप को नोटिफिकेशन मिलते रहे।

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

All World Gayatri Pariwar Official Social Media Platform

शांतिकुंज हरिद्वार के ऑफिशल व्हाट्सएप चैनल awgpofficial Channel को Follow करे

👇👇👇

https://whatsapp.com/channel/0029VaBQpZm6hENhqlhg453J

Shantikunj WhatsApp:- शांतिकुंज की गतिविधियों से जुड़ने के लिए **8439014110 पर अपना नाम लिख कर WhatsApp करें**

Official Facebook Page:-

https://www.facebook.com/awgpofficial

Official Twitter:-

https://twitter.com/awgpofficial

https://twitter.com/DrChinmayP

Official Instagram:-

https://www.instagram.com/awgpofficial

https://www.instagram.com/shantikunjrishichintan

Official Telegram:-

https://t.me/awgpofficial

https://t.me/awgpofficialgroup

https://t.me/shantikunjrishichintan

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

Shantikunj Rishi Chintan Youtube Channel

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel

Youtube Channel:-

https://www.youtube.com/c/RishiChintan

https://www.youtube.com/c/shantikunjvideo

AWGP Official Website

http://www.awgp.org/

http://literature.awgp.org

Click here to subscribe Rishi Chintan Youtube Channel